



विष्णु-परिचय





विश्वमारुता ग्रन्था विभाग  
२१०, कान्वालिस स्ट्रीट, फल्गुत्ता ।  
प्रकाशक—श्रीविशारीमोहन सातरा

---

## विश्व-परिचय

---

प्रथम संस्करण  
फाल्गु, सं० १९६७

मूल्य—एक रुपया

---

शान्तिपुस्तक प्रेस में प्रभात कुमार मुखोपाध्याय  
द्वारा मुद्रित ।



ने औचित्य के सन्ध में विज्ञान थोड़ी सी श्रुति भी क्षमा नहीं करता। इस ओर भी मैं यथासम्भव सतर्क रहा हूँ। वस्तुतः मैं ने कर्तव्य समझ कर ही लिखा है, लेकिन वह कर्तव्य केवल विद्याधियों के प्रति हो सीमित नहीं है, स्वयं अपने प्रति भी है। इसे लिखने के कार्य में मुझे अपने आपको भी शिक्षा देते हुए आगे बढ़ना पड़ा है। छात्र मनोभाव की यह साधना शायद विद्याधियों की शिक्षा साधना के लिये उपयोगी हो भी सकती है।

अपनी कैफियत कुछ विस्तार के साथ ही तुम्हारे सामने देनी पड़ रही है। क्योंकि ऐसा करने से ही इससे लिखने में मेरा जो मनोभाव रहा है वह तुम्हारे निकट स्पष्ट हो सकेगा।

विश्व जगत् ने अपने अति छोटे पदार्थों को छिपा रखा है और अत्यन्त बड़े पदार्थों को छोटा बना कर हमारे सामने उपस्थित किया है अथवा नेपथ्य में हटा रखा है। उसने अपने चेहरे को इस प्रकार सजा कर हमारे सामने रखा है कि मनुष्य उसे अपनी सहज बुद्धि के प्रेम में बैठा सके। किन्तु मनुष्य और चाहे जो कुछ भी हो, सहज मनुष्य नहीं है। यही एक ऐसा जीव है जिसने अपने सहज बोध को ही संदेह के साथ देखा है, उसका प्रतिपाद किया है और हार मानने पर ही प्रसन्न हुआ है। मनुष्य ने सहज शक्ति की सीमा पार करने की साधना के द्वारा दूर को निकट बनाया है, अदृश्य को प्रत्यक्ष किया है, और दुर्बोध को भाषा दी है। प्रकाशशोक के अन्तःकाल में जो अप्रकाश लोका हैं, उन्हीं गहन में प्रवेश करके मनुष्य





के औचित्य के सन्ध में विज्ञान थोड़ी-सी त्रुटि भी क्षमा नहीं करता। इस ओर भी मैं यथासम्भव सतर्क रहा हूँ। वस्तुतः मैं ने वस्तुव्य समझ कर ही लिखा है, लेकिन वह कर्तव्य केवल विद्यार्थियों के प्रति ही सीमित नहीं है, स्वयं अपने प्रति भी है। इसे लिखने के कार्य में मुझे अपने आपको भी शिक्षा देते हुए भागे उठना पड़ा है। छात्र मनोभाव की यह साधना शायद विद्यार्थियों की शिक्षा साधना के लिये उपयोगी हो भी सकती है।

अपनी कंफियत कुछ विस्तार के साथ हा तुम्हारे सामने देनी पड़ रही है। क्योंकि ऐसा करने से ही इसके लिखने में मेरा जो मनोभाव रहा है वह तुम्हारे निकट स्पष्ट हो सकेगा।

विश्व-जगत ने अपने अति छोटे पदार्थों को छिपा रखा है और अन्यन्त बड़े पदार्थों को छोटा बना कर हमारे सामने उपस्थित किया है अथवा नेपथ्य में रखा गया है। उसने अपने चेहरे को इस प्रकार सजा कर हमारे सामने रखा है कि मनुष्य उसे अपनी सहज बुद्धि के प्रेम में पैठा सके। किन्तु मनुष्य और चाहे जो कुछ भी हो, सहज मनुष्य नहीं है। वही एक ऐसा जीव है जिसने अपने सहज धार को ही संदेह के साथ देखा है, उसका प्रतिपाद किया है और हास मानने पर ही प्रसन्न हुआ है। मनुष्य ने सहज शक्ति की सीमा पार करने की साधना के ढांग दूर को निकट बनाया है, अदृश्य को प्रत्यक्ष किया है, और दुर्गन्ध को भापा दी है। प्रकाशलोक के अन्त रात में जो अप्रकाश लोक है, उसी गहन में प्रवेश करके मनुष्य

ने विश्व-व्यापार के मूल रहस्य को निरन्तर उद्घाटित किया है। जिस साधनाके द्वारा यह सब संभव हुआ है उसके लिये सुयोग और शक्ति पृथ्वी के अधिकांश मनुष्या के पास नहीं है। फिर भी जो लोग इस साधना की शक्ति और दान से एक दम वंचित रह गये हैं, वे आधुनिक युग के सीमान्त प्रदेश में जाति बहिष्कृत हो गये हैं।

यह वन में वृक्षों के नीचे सखे पत्ते अपने आप गिर पड़ते हैं और मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं। जिन देशों में विज्ञान की चर्चा हाती रहती है वहाँ ज्ञान के टुकड़े टूट टूट कर निरन्तर बिखरते रहते हैं। इससे वहाँ की चित्तभूमि में उर्वरता का जीव धर्म जाग उठा करता है। उसीके अभाव में हमलोगों का मन अवैज्ञानिक हो गया है। यह दीनता केवल विद्याके विभाग में नहीं, कायक्षेत्र में भी हम लोगों को अकृताथ कर रही है।

मेरे जैसा अनाड़ी जो इस अभाव को थोड़ा-सा भी दूर करने के प्रयत्न में लगा है, इस से वे हो लोग सब से अधिक कौतूहल अनुभव करेंगे जो मेरे ही जैसे अनादियों के दल में हैं। किन्तु मुझे भी कुछ थोड़ा कहना है। उन्चे के प्रति माता का औत्सुक्य तो रहता है लेकिन डाक्टर की तरह उसे विद्या नहीं आती। विद्या तो वह उधार ले सकती है पर उत्सुकता उधार नहीं ली जा सकती। यह औत्सुक्य सेवा शुश्रूषा में जिस रस को मिला देता है वह अपहेला की चोज नहा है।

यह कहना ही व्यर्थ है कि मैं विज्ञान का साधक नहीं,

हु। किन्तु बाल्यकाळ से ही विज्ञान का रस आभ्यास करने में मेरे लोभ का अन्त नहीं था। उस समय मेरी अपस्था शायद नौ दस वर्ष की होगी, बीच-बीच में रजिस्टर के दिन अबानरु सीतानाथ दत्त महाशय आ जाने थे। आज जानता हूँ, उनके पास पूँजी बहुत अधिक नहीं थी किन्तु विज्ञान की दो एक माधारण बातें ज़रा बे दृष्टान्त दे कर समझा देने तो मेरा मन आश्चर्य से भर जाता। याद आता है ज़रा उन्होंने ने पहले पहल काठ का पुरादा देकर दिखा दिया कि जाग पर चढ़ाने से नीचे का गर्म पानी हल्का हो कर ऊपर उठता रहता है और ऊपर का ठंडा और भारी पानी नीचे उतरता रहता है, इसी लिये पानी खीलता है, तो अनपच्छिन्न जल में एक ही समय ऊपर और नीचे निरन्तर इतना भेद घट सकता है यह देख कर मुझे घटा आश्चर्य हुआ था। उस आश्चर्य की स्मृति आज भी मन में विद्यमान है। जिस घटना को स्थित सहज समझ कर पिना सोचे विचारे मान लिया था, वह सहज नहीं है, इस विचार ने शायद पहले पहल उसी दिन मेरे मन को चिन्तामग्न किया था। इस के बाद अपस्था जब शायद बारह की होगी (यह कह रखना अच्छा है कि कोई कोई आत्मी जैसे रंग के अंधे होते हैं अर्थात् रंग नहीं देख सकते वैसे ही मैं तारीख-का-अंधा हूँ—मैं तारीख याद नहीं रख सकता) उस समय पूज्य पिता जी के साथ टल्हौसी पहाड़ पर गया था। सारा दिन टोकुरियों में लड़ कर शाम को डाकघर गले

तक पहुँचता। पिताजी कुर्सी निकाल कर आगन में बैठ जाते। देखते-देखते, गिरिष्ठों ने वेष्टित निग्रिड नोल अधकार में जान पड़ता तारिकाये उतर जाई हैं। वे मुझे नक्षत्रों की पहिचान करा देते। केवल परिचय ही नहीं, सूर्य से उनकी कक्षा की दूरी, प्रदक्षिणा में लगने वाला समय और अन्यान्य विवरण मुझे सुना जाते। वे जो कुछ कह जाते उसे याद करके उन दिनों अनभ्यस्त लेग्नी से मैं ने एक घटा सा प्रग्रह लिया था। रत्न मिला था, इसीलिये लिया सका था। जीवन में यह मेरी पहली धारावाहिक रचना थी, और यह थी वैज्ञानिक सचाई के आधार पर।

इसके बाद उम्र बढ़ती गई। उन दिनों तक मेरी बुद्धि इतनी गुल गई थी कि अन्दाज से अंग्रेजी भाषा समझ सकूँ। सहजगोभ्य ज्योतिर्विज्ञान की पुस्तकें जहाँ जहाँ जो कुछ मिलीं उन्हें पढ़ने में कोई फोर कसर नहीं रखी। बीच बीच में गणित संबंधी दुगमता के कारण मार्ग बन्धुर हो उठा था फिर भी उसकी कृच्छता के ऊपर से ही मन को ठेल-ढाल कर आगे बढ़ाता गया। इस से मैं ने यह बात सीखी है कि जीवन की प्रथम अभिज्ञता के मार्ग में हम जो सब कुछ समझते हों सो बात नहीं है, और सब कुछ स्पष्ट न समझने के कारण हम आगे न बढ़ते हों, यह बात भी नहीं कह सकते। जल स्थल विभाग की भाँति ही हम जितना समझते हैं उस से कहीं अधिक नहीं समझते, तौभी काम चल जाता है और हम आनन्द भी पाते

हैं। कुछ अंश में न समझना भी हमें अग्रसर होने के माग में आगे ठेल देता है। जब मैं गड़की को पढ़ाया करता था तो यह बात मेरे मन में रहनी थी। मैं ने कई बार बड़ी अग्रस्था या पाठ्य साहित्य छोटी उम्र के विद्यार्थियों को पढ़ाया है। उन्होंने कितना समझा है, इसका पूरा हिस्सा नहीं लिया, लेकिन यह जानता हूँ कि हिस्सा के बाहर भी वे बहुत कुछ समझ लेते हैं, जो निश्चय ही अपेक्ष्य नहीं है। यह जोध परीक्षक की मार्फत मेरे वाली पेन्सिल के अधिष्ठाता का नहीं है किन्तु इसका मन्त्र्य काफी है। अन्ततः मेरे जीवन से यदि नस प्रसार यंत्रों पर सग्रह की हुई राते निकाल दी जाय तो बहुत कुछ जाता रहेगा।

मैं ज्योतिर्विज्ञान की सरग पुस्तकें पढ़ने लगा। उन दिनों इस विषय की पुस्तकें कम नहीं निकली थीं। सर रायट बाल की गड़ी पुस्तक ने मुझे काफी आनन्द दिया है। इस आनन्द का अनुसरण करने की आकांक्षा से निउफोम्यस्, फामरिय प्रभृति अनेक लेखकों की अनेक पुस्तकें पढ़ी हैं—बीज और रेशा समेत निगलना गया है। इसने बाद एक बार साहस सचय करके हक्सली की लिपी हुई प्राणितत्त्व सवधी एक निबन्धमाला शुरू की। ज्योतिर्विज्ञान और प्राणिविज्ञान फेजल इन दो विषयों को ही मैं उलटना पुलटता रहा। इसे पक्की शिक्षा नहीं कह सकते अर्थात् इसमें पाठित्य की बड़ी गथाई नहा है। किन्तु निरन्तर पढ़ते पढ़ते मन में एक वैज्ञानिक वृत्ति स्वाभाविक हो उठी थी, आशा करता हूँ,

अधविश्वास की मृदता के प्रति मेरी जो अथज्ञा है उसने बुद्धि की उच्छृंखलता से बहुत दूर तक मेरी रक्षा की है। फिर भी मुझे ऐसा नहीं लगता कि उन कागण से कवित्व के इलाके में कल्पना के महल की कोई विशेष हानि हुई है।

आज आयु के अन्तिम पर्य में मन नये प्राच्य तत्त्व—वैज्ञानिक मायावाद—से अभिभूत है। उन दिनों जो कुछ पढ़ा था, उस का सब समझ नहीं सका था, लेकिन फिर भी पढ़ता ही गया। आज भी जो कुछ पढ़ता हूँ उसमें का मय कुछ समझना मेरे लिये संभव नहीं है और अनेक विशेषज्ञ पंडितों के लिये भी ऐसा ही है।

जो लोग विज्ञान से चित्त का व्याघ्र समग्रह कर सकते हैं वे नपस्वी हैं।—मिष्टान्नमितरै जना, मैं केवल रस पाता हूँ। इस में गर्व करने की कोई बात नहीं है, किन्तु मन प्रसन्न हो कर कहता है, यथालाभ। यह पुस्तक उस यथालाभ की ही भोली है। मधुकर की वृत्ति का आश्रय करके सात पांच घंटों से इसका समग्रह किया गया है।

पाण्डित्य तो अधिक है ही नहीं, इस लिये उसे अज्ञात बना रखने के लिये विशेष उद्योग नहीं करना पड़ा। प्रयत्न किया है भाषा की ओर। विज्ञान की सम्पूर्ण शिक्षा के लिये पारिभाषिक शब्दों की जरूरत है। लेकिन पारिभाषिक शब्द चर्च (चराकर गये जाने वाले) पदार्थ की जाति के हैं, दाँत जमने के बाद वे पथ्य होते हैं। यह बात याद करके जहाँ तक हो

समा है परिभाषाओं से ग्रन्थ कर सहज भाषा की ओर ही ध्यान दिया है।

इस पुस्तक में एक बात को लक्ष्य करना—इसकी भाषा अर्थात् इसकी भाषा सहज ही चल सके, यह कोशिश तो इसमें है परन्तु मालूम बहुत कम करने हुआ यना तो मैं ने अपना कर्तव्य नहीं माना। क्या करके उचित करने को क्या करना नहीं कहते। मेरा मत यह है कि जिनका मन अर्धप्रतिष्ठित है, वे जितना स्वभावतः ले सकेंगे, उतना ले लेंगे बाकी को अपने आप छोड़ देंगे। लेकिन इसी कारण से उन के पक्ष को प्रायः भोज्यशून्य कर देने को मध्यमहार नहीं कहा जा सकता। मन लगाना और कोशिश करके समझने का प्रयत्न करना भी शिक्षा का अंग है, यह आनन्द का ही सहचर है। बाल्यकाल में अपनी शिक्षा का जो प्रयत्न मैं ने ग्रहण किया था उस पर से यही मेरी अभिन्नता है। एक विशेष उम्र में जब दूध अच्छा नहीं पगता था उस समय मैं उड़ों को धोया देने के लिये दूध को नीचे से ऊपर तक फेंकि कर के कटोरा भगने का पड़्यत्र किया करता था। जो लोग बालकों के पढ़ने की किताबें लिखा करते हैं, देखता हूँ, वे भी काफी मात्रा में फेंक की व्यवस्था किया करते हैं। यह बात वे भूल जाते हैं कि ज्ञान का जैसा आनन्द है, वैसा ही उसका मृत्यु भी है। लड़कपन से ही उस मृत्यु के चुराने में कसर करने से यथार्थ आनन्द के अधि-कार पाने में भी कसर रह जाती है। चला कर पाने से जहाँ

एक तरफ दाँत मजबूत होते हैं वहाँ दूसरी तरफ भोजन का पूरा स्वाद भी मिलता है। यह पुस्तक लिखते समय यथासाध्य इस बात को भूलने नहीं दिया है।

श्रीमान प्रमथनाथ मेनगुप्त एम० एस सी० तुम्हारे ही पुराने विद्यार्थी हैं। वे शान्तिनिकेतन विद्यालय में विज्ञान के अध्यापक हैं। पहले मैं ने इस पुस्तक के लिखने का कार्य उन्हीं को सौंपा था। धीरे धीरे हटते हटते सारा भार अन्त में मेरे ऊपर ही आ पड़ा। वे अगर शुरू न करते तो मैं समाधा न कर सकता। इसके सिवा अनन्यस्त रास्ते पर अव्यवसायी के साहस से काम भी नहीं चलता। उनके पास से मुझे भरोसा भी मिला है और सहायता भी मिली है।

अलमोडा आकर, एकान्त में, इसका लिखना पूरा कर सका हूँ। मेरे स्नेहास्पद मित्र वशी सेन को पाने से एक अच्छा अत्र सर भी मिल गया। उन्होंने ने यदापूर्वक यह सारी रचना पढ़ी है। पढ़ कर प्रसन्न हुए हैं, यही हमारे लिये सब से बड़ा लाभ है।

मेरी अस्वस्थता की हालत में स्नेहास्पद श्रीयुक्त राजशेखर घसु महाशय ने बड़े बल के साथ प्रूफ सशोधन करके पुस्तक प्रकाशित करने के कार्य में मुझे विशेष सहायता दी। इसलिये उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

शान्तिनिकेतन }  
० आश्विन, १३४४ }

रवीन्द्रनाथ ठाकुर



मना है परिभाषाओं में बच कर सहज भाषा की ओर ही ध्यान दिया है।

यस पुस्तक में एक बात को लक्ष्य करना—इसकी नारा जवान इसका भाषा सहज ही चल सके, यह कोशिश तो इसमें है परन्तु मात्र उहुत कम करके हुआ जाना को मैं ने अपना कर्तव्य नहीं माना। दया करके धर्जित करने को दया करना नहीं कहते। मेरा मन यह है कि जिनका मन अर्थविक सित है, वे जितना स्वभाषत ले सफेंगे, उतना ले गेंगे बाकी को अपने आप छोड़ देंगे। लेकिन इसी कारण से उन के पक्ष को प्रायः भोज्यशून्य कर देने को सङ्घर्षहार नहीं कहा जा सकता। मन लगाना और कोशिश करके समझने का प्रयत्न करना भी शिष्या का अंग है, यह आनन्द का ही सहचर है। बाल्यकाल में अपनी शिक्षा का जो प्रयत्न मैं ने ग्रहण किया था उस पर से यही मेरी अभिप्राता है। एक विशेष उम्र में जब दूध अच्छा नहीं लगता था उस समय मैं बच्चों को धोखा देने के लिये दूध को नीचे से ऊपर तक फेंकिल कर के कटोरा भरने का प्रयत्न किया करता था। जो लोग बालकों के पढ़ने की किताबें लिखा करते हैं, देखता हूँ, वे भी काफी मात्रा में फले की व्यवस्था किया करते हैं। यह बात वे भूल जाते हैं कि ज्ञान का जैसा आनन्द है, वैसा ही उसका मृत्यु भी है। लडकपन से ही उस मृत्यु के चुकाने में बसर करने से यथार्थ आनन्द के अधि कार पाने में भी बसर रह जाती है। चचा कर गाने से जहा

एक तरफ दाँत मजबूत होते हैं वहाँ दूसरी तरफ भोजन का पूरा न्याय भी मिलता है। यह पुस्तक लिखते समय यथासाध्य दन्त रोग को भूलने नहीं दिया है।

श्रीमान् प्रमथनाथ सेनगुप्त एम० एस सी० तुम्हारे ही पुराने मित्रा हैं। वे शान्तिनिधेयन विद्यालय में विज्ञान के अध्यापक हैं। पहले मैं ने इस पुस्तक के लिखने का कार्य उन्हीं को सौंपा था। धीरे धीरे हटते हटते सारा भार अन्त में मेरे ऊपर ही आ पड़ा। वे अगर शुरू न करते तो मैं समाधा न कर सकता। इसके सिवा अनभ्यस्त रास्ते पर अव्यवसायी के साहस से काम भी नहीं चलता। उनके पास से मुझे भरोसा भी मिला है और सहायता भी मिली है।

अलमोडा आकर, एकान्त में, इसका लिप्या पूरा कर सका हूँ। मेरे स्नेहास्पद मित्र पद्मी सेन को पाँच से एक अन्धा अन्ध सर भी मिल गया। उन्होंने ने यत्नपूर्वक यह सारी रचना पढ़ी है। पढ़ कर प्रसन्न हुए हैं, यही हमारे लिये सब से बड़ा लाभ है।

मेरी अस्वस्थता की हालत में स्नेहास्पद धीरुक्त राजशेखर घसु महाशय ने बड़े बड़े के साथ प्रूफ सशोधन करके पुस्तक प्रकाशित करने के कार्य में मुझे विशेष सहायता दी। इसलिये उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

शान्तिनिधेयन  
२ आश्विन, १

रवीन्द्रनाथ ठाकुर



## अनुवादक का वक्तव्य

विश्व परिचय कवि की भाषा में लिखी हुई वैज्ञानिक पुस्तक है। बंगला में ८१० महोनों के भीतर पुस्तक चार बार छप चुकी। प्रतिवार लेखक ने इस में सशोधन और परिपूर्ण किये हैं। यह अनुवाद अत्र आधा छप चुका था तभी मूल पुस्तक चौथी बार संस्कृत और परिपूर्ण हुई और अनुवाद की छपाई समाप्त होने के पहले ही छप गई। इसीलिये इस सत्र से नये संस्करण का उपयोग अनुवाद में नहीं किया जा सकेगा।

विश्व परिचय जालको लिये लिखा गया है, परन्तु प्राप्त व्यस्क विद्वानों को भी इसमें कम आनन्द नहीं मिलेगा। अनुवादक को अनुवाद करते समय भाषा की सरलता और उसका माधुर्य दोनों का सामंजस्य करते हुए चलना पड़ा है। कभी कभी निरुपाय हो कर दोनों में से किसी एक का मोह छोड़ना भी पड़ा है। भाषा के माधुर्य का मोह छोड़ने में उसे प्राय ही कठिनाई में पड़ना पड़ा है।

एक बात लिखी कि पाठकों को इस में नई जान पड़ सकती है। मूल लेखक योगेश्वर महाराज और विस्मयादि बोधक चिह्नों का प्रयोग बहुत कम करते हैं। उनका कहना है कि अप्रेजी से इन चिह्नों को नहीं गोल गालों का ही प्रयोग करना चाहिये।



## अनुवादक का वक्तव्य

त्रिभुव परिचय कवि की भाषा में लिखी हुई यैत्राणि पुस्तक है। बंगला में ८१० महोनों के भीतर पुस्तक चार बार छप चुकी। प्रतिवार लेखक ने इस में संशोधन और परिश्रम किया है। यह अनुवाद जो आधा छप चुका था तभी मृत पुस्तक खोयी गई संस्कृत और परिघटित हुई और अनुवाद की ग्राह्य समान होने के पहले ही छप गई। इसीलिये हम सब से नये संस्करण का उपयोग अनुवाद में नहीं किया जा सका।

त्रिभुव परिचय वालकों लिये लिखा गया है, परन्तु प्राप्त धन्यस्क विद्वानों को भी इसमें कम आनन्द नहीं मिलेगा। अनुवादक को अनुवाद करते समय भाषा की सगुण्य और उसका माधुर्य दोनों का सामञ्जस्य करते हुए गहरा पड़ा है। कभी कभी निरुपाय हो कर दोनों में से किसी एक का मोह छोड़ना भी पड़ा है। भाषा के माधुर्य का माह छोड़ने में हमें प्राय ही कठिनाई में पड़ना पड़ा है।

एक रात हिंदी के पाठकों को हम में नई ज्ञान गट बनती है। मूल लेखक बंगला में प्रशवाचक और विषयवाचि योत्र चिह्नो का प्रयोग बहुत कम करते हैं। उनका कहना है कि अंग्रेजी से इन चिह्नों को हमें सोच समझ कर ही प्रयोग

हमारी भाषाओं के नहीं, क्या यदि शब्द अंग्रेजी के where which आदि जैसे द्व्यर्थक नहीं हैं। उनमें स्वयं प्रश्न का भाव है। इसी लिये अंग्रेजी में जब इन शब्दों के लिये प्रश्नवाचक चिह्न दिये जाते हैं तो ठाक है, पर हिंदी उगला आदि भाषाओं में प्रश्न का चिह्न देना निरर्थक है। अनुवाद में भी इस युक्ति को स्वीकार कर लिया गया है।

— — —

## सूचो

परमाणुलोक	१
नक्षत्रलोक	४०
सौरजगत्	६६
ग्रहलोक	७४
भूलोक	८७
उपसंहार	११२









ऐण्टोमीडा की नीहारिका

# विश्व-परिचय

## परमाणुलोक

हमारा सर्जात्र शरीर कई रोध या समझ की शक्तियों को ले कर पैदा हुआ है, जैसे देखने का रोध, सुनने का रोध, सूंघने का रोध, चपने का रोध और छूने का रोध। इन्हीं को हम अनुभूति कहते हैं। इन के साथ हमारा अच्छा पुरा लगना और हमारे सुख दुःख गुथे हुए हैं।

हमारी इन अनुभूतियों की सीमा बहुत अधिक नहीं है। हम बहुत थोड़ी दूर तक ही देख सकते हैं और बहुत कम बातें सुन सकते हैं। अन्यान्य रोध शक्तियों की दौंड भी बहुत दूर तक नहीं है। इसका मतलब यह है कि हम जितनी शक्ति का समझल ले कर आये हैं वह इसी हिसाब से मिली है कि हम इस पृथ्वी पर अपने प्राण बचा रखें।

जिस नक्षत्र से पृथ्वी का जन्म हुआ है और जिसकी ज्योति इसके प्राणों का पालन कर रही है वह है सूर्य। इस सूर्यन हमारे चारों ओर प्रकाश का पर्दा टाँग दिया है। पृथ्वीने मिया इस विश्वमें और भी कुछ है, यह बात वह देखने नहीं देता।

समाप्त होता है, सगज डूबता है, जालोक का पटा

हट जाता है, और अन्तरिक्ष को छाप कर असंख्य नक्षत्र निकल पड़ते हैं। तब हम समझ सकते हैं कि इस विश्व की चौहद्दी पृथ्वी को छोड़ कर बहुत दूर तक चली गई है। किन्तु केवल अनुभूतियों के बल पर हम यह नहीं समझ सकते कि यह दूरी कितना है।

इस दूरी के साथ हमारा परमात्र योग ज्ञानों के देखने से है। जहाँ से कोई आयाज नहीं जाती, वहाँ कि आयाज का रोध हम से होता है। यह हमारा चाकर की तरह पृथ्वी पर लिपटी हुई है। हमारा पृथ्वी पर ही शब्द उत्पन्न करती है और उस के तरंगों को हमें उतर चलाया करती है। पृथ्वी के बाहर प्राण (गर्भ) और म्याद का कोई अर्थ ही नहीं होता। हमारे स्पर्श बोध में गर्मी और सर्दी अनुभव करने का एक बोध है। पृथ्वी के बाहर इस बोध का स्वयं कम से कम एक जगह काफी अधिक है। सूर्य से धूप आती है और धूपसे गर्मी। हम गर्मी से हमारा प्राण बचे हुए हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो सूर्य से लाखों गुना अधिक गर्म हैं पर उनकी गर्मी हमारे बोध तरंग नही पहुँचता। लेकिन सूर्य को तो हम पराया नही कह सकते। जिन असंख्य नक्षत्रों से यह विश्व-ग्रन्थाष्ट बना है, सूर्य उनमें हमारा सब से अधिक 'अपना' है। फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि सूर्य पृथ्वी से है बहुत दूर। कम दूर नही, नौकरोडों ताँस लम्बा माल दूर। सुन कर चौंक उठने से काम नहीं चलेगा। जिस ग्रहण्ड में हम रह रहे हैं उस में यह दूरी नक्षत्र

लोक की स्र दृष्टियो निचले दर्जे की है। कोई भी दूसरा नश्य इससे अधिक नजदीक नहीं है।

तर्ता दूरी की बात सुनकर हमारा मन चौंक उठता है, क्यों कि जल और मिट्टी से बना हुआ यह पिंड अर्थात् यह पृथ्वी बहुत ही छोटी है। पृथ्वी की स्र से उड़ी रेखा अर्थात् उसकी त्रिपुररेखा के कटिबेधन का रास्ता सिर्फ २५ हजार मील का है। त्रिभ के साथ हमारा परिचय ज्यों ज्यों रहता जायगा त्यों त्यों हम देखेंगे कि ससारके बृहत्त्व और दृग्त्व की मूर्ती में यह पचीस हजार की सत्या तिहायत मामूली है। यह पृष्ठ ही कहा गया है कि हमारी बोध शक्ति कि सीमा बहुत ऊँची है। जिस दूरी को लेकर हमें सर्वदा काग्यार करना पड़ता है वह तो और भी थोड़ी है। किन्तु हमारे प्राणायाम का प्रयोजन उसी में समाप्त हो जाता है और बहुत बलवान् रहता है। इसी मामूली दूरी के भीतर ही हमारे देहों और चलने फिरने का लेपा-जोखा निर्दिष्ट है।

लेकि जत्र पर्व उठा तो हमारी अनुमति के अनुसार सीमा के भीतर ही बृहत् विध्वने निनन्द ऊँचा ऊँचा गर हत्के से इशारे से अपने आप को प्रकट किया जाता है न करता तो हमारा जानना होता ही नहीं, क्योंकि यही चेत को देख सकने लायक आख हमारे दृग्त्व का है। अन्य उच्च इतना सा देखने को ही मान त्रिभ के अन्तर्गत की दृष्टि के जि

मनुष्यको सतोष नहा। इन्द्रिय रोध ने वस्तु का जगसा जाभासमात्र दिया। किन्तु मनुष्य की बुद्धि की पहुँच उसकी रोध शक्ति की अपेक्षा बहुत अधिक है। संसार में जितनी पहुँच हो सकती है, सब के साथ ढाँड लगाने की स्पष्टता उस में है। यह (बुद्धि) इस विषय जगत् की प्रिया पैमाइश की परत लेने निकल पड़ी, अनुभूति ने वस्तुओं को फुसलाने वाली जो अफवाह उड़ा रखी थी उसे उसने अस्वीकार कर दिया। नौ करोड़ तीस लाख मीलो को हम किसी प्रकार अनुभव नहीं कर सकते, किन्तु फिर भी बुद्धि हार माननेवाली नहीं। यह हिसाब लगाने बैठ गई।

बाहर के विश्व लोक की बात तो ठीक छोड़ दी जाय, जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं उस से अधिक ठीक तो और कुछ नहीं है। तभी इस के समस्त अंगों को एक साथ देखा करना हमारे रोध के लिये अमभव है। किन्तु एक छोटे से ग्लोब पर यदि उसका मानचित्र अंकित देखें तो पृथ्वी को समग्र रूप से जानने की एक मामूली नींव पड़ जाती है। आयतन की दृष्टि से यह ग्लोब पृथ्वी के कई हजार हिस्सों में से एक हिस्सा है। हम अन्यान्य रोधों को छोड़ कर केवलमान दृष्टिरोध की परीक्षा से गुरुरा हुआ परिचय ही इस में पाते हैं। विस्तारित प्रियकरण के हिसाब से देखा जाय तो यह परिचय एक दम पोला है। अधिक देखने की शक्ति हम में नहीं है, इसी लिये इसे छोटा करके ही देखना पडा।

प्रति दिन गनमें इस विश्व को छोटा करके हमारे सामने रखा जाता है, मानो उसे हमारे निर के ऊपर आकाश रूपा ग्लोब में दिगाया जाता है। दृष्टियोत्र के सिवा और कोई भी योत्र इसमें स्थान नहीं पाता। जिसकी वान सोचो से भी मन अभिभूत हो जाता है उसी इतने तिराद् विश्व को द्वि-चक्राल से जाग्रद् इस छोटे से आकाश में बद्ध करके हमारे सामने रख दिया गया है।

कितना छोटा करके रखा गया है, इस बात का जग-सा जगजा लगाने के लिये सूर्य का दृष्टान्त मन में लाना होगा। स्वभावन ही हम जितनी बड़ी चीजों को जान या अनुभव कर सकते हैं उन में सबसे बड़ी है यह पृथ्वी। इसे हम टुकड़ा टुकड़ा करके ही देख सकते हैं। फिरभी सूर्य इस पृथ्वी से चौदह लाख गुना बड़ा है। इतना बड़ा सूर्य आकाश के एक तिरादे सोने की एक गाली-जैसा दिगाई देता है। सूर्य के भीतर होने वाले भीषण उथल पुथल की गरज जब मालूम होती है और उसके बाद जब देखता है कि प्रातःकाल हमारे आम की रागीचे के पीछे वह सोने की पहिया (सूर्य) धीरे धीरे ऊपर उठती है, जीव जन्तु और वृक्ष लतायें आनन्दित हो उठती हैं, तब सोचा करते हैं, हमें किस प्रकार भुला रखा गया है। हम से यह दिया गया है कि तुम्हारे जीवन के कारगर में इस से अधिक जानने की कोई जरूरत नहीं। और अगर हम भुलाये न गये होते तो जीते भी कैसे। वह सूर्य अपने तिराद् स्वरूप



में जो कुछ है वह यदि हमारी अनुमति के थोड़ा भी निकट जाता तो हम मुहर्त्त भग में लुप्त हो जाते। यह तो हृद सूर्य की बात। इस सूर्य से और भी अनेक गुना बड़े और भी करोड़ों नक्षत्र हैं। उन्हें हम प्रकाश के बड़े छोटे छोटे त्रिदुर्जों के समान देख रहे हैं। जिस दृष्ट्य के भीतर नक्षत्र छितराये हुए हैं, सोच कर उनका फोड़ कूल मिनारा नहीं पाया जाता। जिस आसमान में विश्व जगत् का यह डेरा है वह कितना बड़ा है, इसकी धारणा हम एक और तरह से कर सकते हैं। हमारे ताप घोर के पास पृथ्वी के ग्राहक से एक बहुत बड़ी शरर बड़े जोरों के साथ आ रही है, वह है धूप का गर्मी यह शरर नौ करोड़ तीस लाख मील दूर की है। लेकिन आकाश के फोने फोने में करोड़ करोड़ नक्षत्र फैले हुए हैं, इन में से बड़े तो सूर्य से भी लाखों गुना अधिक गर्म हैं। किन्तु हमारे सीमाग्य बश उनका सम्मिलित उत्ताप गन्ते में ही इस प्रकार मर जाता है कि विश्व-यात्री इस अग्नि काण्ड से हमारा आकाश दुसह नहीं हो जाता। कितनी दूरी का है यह रास्ता, कितना विशाल है यह आकाश। ताप की अनुमति की स्पर्श करने वाली नौ करोड़ मीलें कि दूरी इसके सामने नितांत लुच्छ है। बड़े बड़े यंत्रों में ग्रहण भोजन के लिये जो चूल्हे जगये जाते हैं उनके पास वैटना सहज नहीं है, लेकिन सयें दस बने के आस पास शर के गसोइयों में जो आग जगती है उसकी गर्मी विशाल आकाश में फैल जाती है, इसी लिये हम शहर में घास कर सकते हैं। नहा

तो सत्र जाच यदि इकट्ठा हो जाता तो हमारा वास करना ही मुश्किल हो जाता। नक्षत्र लोक की घात भी कुछ ऐसी ही है। वहाँ की आग की जाच जितनी भी प्रचण्ड क्यों न हो उसके चारों ओर का आकाश जंग भी बहुत विशाल है।

इस घिगाड़ दूरी से भी नक्षत्रों के अस्तित्व का समाचार कौन ले आता है। सहज उत्तर है प्रकाश। किन्तु प्रकाश तो चुपचाप बैठ कर घर नहीं सुना जाता, यह डाफहरकारे की तरह पीठ पर घर लेकर दौड़ता चलता है। यह विज्ञान का एक जबरदस्त आगिकार है। चलना भी मामूली चलना नहीं, ऐसी तेज चाल विश्व ग्रहाण्ड में किसी दूसरे को नसीब नहीं। हम लोग इस छोटी पृथ्वी के जादूमी हैं इसी लिये अतक जगत् की सत्र से उड़ी तेज चाल की घात जानने का सुयोग हमें नहीं मिला। एक दिन यह घर भी विज्ञानियों के आश्चर्यजनक कगमात घाले यत्र में एकड़ गई—यह प्रकाश एक सेकेंड में एक लाख छियामी हजार मील के वेग से दौड़ता है। यह एक ऐसा प्रचंड वेग है जो अक में तो लिख दिया जा सकता है, लेकिन मन में नहा लाया जा सकता, जिसकी बुद्धि से तो परीक्षा होती है, लेकिन अनुभव से नहीं। प्रकाश की इस तेज दौड़ को अनुभव से समझने योग्य स्थान इस छोटी सी पृथ्वी पर नहीं है। इस याँड़ी सी सकरी जगह में उसके चलने को हम नहीं चलने के समान ही देखते आ रहे हैं। परीक्षा करने योग्य स्थान महाशून्य में ही मिल सकता है। सूर्य उस महाशून्य में

जितनी दूरी पर प्रतमान है वह जितने करोड़ मील भी क्यों न हो ज्योतिष लोक के पैमाने से बहुत अधिक रहा है।

इसलिये इस दूरत्व के भीतर अपेक्षाकृत छोटे माप से मनुष्य ने प्रकाश का झोंका देखा। अगर मिली कि इस शून्य को पार उसके पृथ्वी तर सूर्य के प्रकाश के जाने में साढ़े आठ मिनट समय लग जाता है। अर्थात् सूर्य जिस समय हमारे दृष्टि तर उपस्थित हुआ, याम्ना में उस से साढ़े आठ मिनट पहले ही आ गया था। इस आगमन की वजह से प्रकाश नामक हरकार को आठ मिनट के करीब समय लग गया। इतनी देरी में कुछ विशेष नुस्खान नहीं, यह तो प्रत्यक्ष तार्का वजह ही मिली है। किन्तु सौरजगत् के सूर्य से नजदीक जो नक्षत्र है, अर्थात् नक्षत्र रोश में जिसे हम अपने मुहल्ले का पड़ोसी कह सकते हैं, उसने जब वजह दी कि 'देखो, मैं यहाँ हूँ', तो उसकी यह वजह यहाँ तर पहुँचा देने में प्रकाश को प्रायः चार साल से भी अधिक समय लग गया। अर्थात् अभी अभी जो वजह मिली वह चार साल की रासी है। यद्यपि वजह सीधे दी जाती तो काफी हो जाता किन्तु और भी अधिक दूरी पर नक्षत्र है जहाँ से प्रकाश के जाने में लाखों वर्ष लग जाते हैं। आकाश में प्रकाश के इस आगमन की वजह पर विज्ञान के सामने एक प्रश्न उठा—इसके चरने का ढग कैसा है। यह मापन अत्यन्त की बात है। अर्थात् मिली है कि उसका चरना अत्यन्त सूक्ष्म तरंग की तरह है। फिर भी

ग्रहण मगजपक्षी कण्ठे भी कुछ समझा नहीं जा सका है कि यह तरंग है किस चीज की, केवल प्रकाश के व्यवहार से इतना निश्चित जा लिया गया है कि है वह तरंग ही। लेकिन मनुष्य के मन को हैरान करने के लिये साथ ही साथ एक और भी जुट्टा समाचार अपनी तमाम गवाही माखी के साथ हाजिर हुआ, उसने खर दी कि प्रकाश असंख्य ज्योतिरूप लिये हुए है, अनि क्षुद्र भींसी के कणों की तरह उसका वर्णन हो रहा है। इन दो परस्पर विरुद्ध समाचारों का मिलन कहाँ होता है यह बात अब भी निश्चित नहीं हो सकी है। इस से अधिक ज्वरज में डालने वाली एक परस्पर विरुद्ध बात और है। यह यह कि, बाहर जो कुछ हो रहा है वह एक ऐसा कुछ है जो तरंग और वर्ण है, लेकिन भीतर जो कुछ हम पाते हैं वह न यह है न वह, उसे हम प्रकाश कहते हैं,—इसका मतलब क्या है, सो बात कोई पंडित अब तक बता नहीं सका है।

जिसे सोचा नहीं जा सकता, जो देखने-सुनने के बाहर है, उसके विषय में इतनी सूक्ष्म और इतनी विशाल खर मिली कैसे, यह सवाल उठ सकता है। फिलहाल यह मान लेने के सिवा उपाय नहीं है कि इसके लिये निश्चित प्रमाण है। जो लोग ये प्रमाण सग्रह कर रहे हैं उन की ज्ञान की तपस्या असाधारण है, उनके सन्धान का मार्ग अत्यन्त दुर्गम है। उनकी बात को जाँच पड़ताल कर लेने लायक विद्या हम में से ग्रहणों के पास नहीं है। थोड़ी विद्या लेकर अविश्वास करके हमें स्वयं टग जाना पड़े-

गा। प्रमाण के समूहों में ही हुए हैं। उस समूहों चलने की सामाना यन्त्र करोगे, शक्ति यदि होगी, तो एक दिग्गज सत्र यात्रों को लेकर इन सत्र मामलों में सजाल जगत् सहज ही हो सकेगा।

तब तब प्रकाश की तरंगों की गति ही समझ ली जाय। ये तरंग फैलते हैं हा तरंग की धारा नहीं है। इनके साथ अनेक तरंगों ने दृग्ग्राही है। कुछ तो निर्याद दे जाती हैं, और कुछ नहीं। यहाँ यह कह गमना जरूरी है कि जो प्रकाश विद्युत् नहा देता उसे चोलचाल की भाषा में प्रकाश नहीं कहते। किन्तु विद्युत् दे या न दे, किसी एक शक्ति का इस प्रकार तरंगित रूप में चलना ही जगत् दोनों का स्वभाव है तो त्रिभुवनस्व की पुष्पक में उनका (न दिखने वाली तरंगों का) शक्ति नाम देना अनुचित है। बड़ा भाई गुरु नामी गुरुमी है और छोटे भाई को छोड़ नहा जानता, तभी वशातत के कारण दोनों की उपाधि एक ही होती है, वह भी वैसे ही समझना चाहिये।

प्रकाश की तरंगों के अपने दृग्ग्राही एक और भी तरंग है। इसे हम आँखों से नहीं देखने, स्पर्श से समझते हैं। यह है ताप की तरंग। सृष्टि के कार्य में उसका गुरु प्रताप है। इसी तरह के प्रकाश की तरंग की जात के वह पदार्थ हैं जिन में ऊँ स्पर्श से जाने जाते हैं, वह स्पर्श से समझे जाते हैं, किसी किसी को हम स्पष्ट प्रकाश के रूप में जानते हैं और साथ ही ताप के रूप में अनुभव भी करते हैं और किसी को देख भी नहीं

सकते और मयश से भी नहीं समझ सकते। हमारे निम्न प्रकाशित प्रकाशित इन प्रकाश तरंगों की भाँड को यदि एक ही नाम देना हो तो उसे तेज कहा जा सकता है। विद्युत्प्रति के आदि मय और अन्त में इसी तेज का कम्पा विभिन्न अवस्थाओं में छिपा हुआ है। पन्ना हो या गोहा, गहर से देखने से जान पड़ता है कि उनके भीतर कोई हिलना-डुलना या जान्दोलन नहीं है। वे मानों स्थिरता की जादूश्रृंखला हैं। किन्तु यह बात सिद्ध हो चुकी है कि उन्हे अणु परमाणु अथवा अन्यत्र मय पदार्थ जि दे हम देख नहीं सकते, लेकिन जिनके मिलित होने से ये गने हैं, सर्वदा भीतर ही भीतर काँप रहे हैं। जब ये ठंडे होते हैं तब भी काँपते हैं और धँपकँपी जब और भी तेज हो जाती है तब गर्म हो कर गहर से ही हमारी रोध शक्ति के निरुद्ध प्रत्यक्ष हो जाती है,—हम इसे अनुभव करने लगते हैं। जाग में जलाने से लोहे के परमाणु काँपते-काँपते इतने अधिक अस्थिर हो उठते हैं कि उनकी उत्तेजना अधिक देर तक छिपी नहीं रहती। उस समय कम्पा की तरंग हमारे शरीर की स्पर्श नाटी को धका भाग कर उसके भीतर जिस गहर को फैला देती है, उसे हम गमा कहते हैं। स्तुत गर्मी हमें चोट पहुँचाती है। प्रकाश चोट पहुँचाता है आँखों में और गर्मी शरीर में।

उत्पन्न में एक दिन मास्टर साहब ने दिखाया था कि लोहे का टुकड़ा अग्नि में तपाने पर पहले गर्म होता है फिर रूख लाल और अन्त में उज्ज्वल स्वेत हो जाता है। मुझे मूँच याद आ रहा

है कि उस दिन इस बात ने मुझे गूढ़ सोचने को बाध्य किया था। मैं सोच रहा था कि अगर तो कोई एक द्रव्य नहीं है जो लोहे के साथ गहर से मिश्र कर लोहे के द्वारा इस प्रकार के नाना प्रकार के भाव उत्पन्न दे सके। लेकिन इतने दिन बाद आज सुनता हूँ कि और भी अधिक ताप देने से यह लोहा गैस हो जाता है। और यह सब कुछ इसी जादूगर ताप की कार्रवाई है, जो सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक चल रही है।

सूर्य का प्रकाश सफेद है। इस सफेद रंग में सात भिन्न भिन्न रंग मिले हुए हैं। मानों कोई सतरंगा साज है जो समेट लेने पर सादा निपता है और फैला देने पर सतरंगा। पुगने जमाने में भाङ फानूस का प्रचार था, रिजली रत्ती के प्रचार से इसका अर्थ बेश निकाला हो गया है। इस भाङ में तिकोने काच के टुकड़े भूला जगने थे। इस तरह के तिकोने काच के टुकड़ों का गुण यह है कि उनके भीतर से यदि घृष निपले तो उससे सात रंगों के प्रकाश झूट कर छितरा जाते हैं। और एक के बाद दूसरे रंग इस क्रम से रिज जाते हैं, बैंगनी (violet) गनि नील (indigo), नील (blue) हरा (green) पीला (yellow) नारंगी (orange) और लाल (red)। ये सात रंग आपस से देखे जाते हैं पर इनके क्षेत्रों किनारों पर और भी भिन्न भिन्न प्रकार के प्रकाश की तरंगें उठा करती हैं, जो हमारी महज चेतना की पकड़ में नहीं जाता। उस जानिना जो नेत्र बैंगनी रंग के उस पार है उसे ultra-violet light

रहते हैं। सहज भाषा में यह समझते हैं—यंगनी पार का प्रकाश। और जो प्रकाश लाल के इन्फ्रारे में नहीं आ सता, बल्कि उससे ऊपर हो गई गया है उसे कहते हैं, infra red light इसे लाल पार का प्रकाश कह सकते हैं। सर विलियम हर्शेल एक बहुत बड़े उद्योतिर्पी थे। उन्होंने निकोने कान्न के टुकड़े के भीतर से परीक्षा करने प्रकाश की मन्तगा छटा देनी दी। उन्होंने ताप-माप की नली ले कर एक एक रंग के पास रख कर देखा। फिर लाल रंग पार करके नली को रंग रहित अन्धकार स्थान के पास ले गये। लेकिन वहाँ भी गर्मी रुकनी नहीं दिखाई दी। उस समय समझा गया कि इस अधकार में छिपा हुआ और भी कोई प्रकाश है। इस के बाद एक जर्मन रसायनी आये। एक फोटोग्राफी का प्लेट लेकर ये परीक्षा में जुट गये। इस प्लेट पर बैंगनी से लेकर लाल तक सात रंगों की पथर मिला। फिर उन्होंने बैंगनी पार करके अधकार स्थान की जाँच की। आखिरकार जो चीज आस की पकड़ में नहीं आई थी वह प्लेट की पकड़ में आ गई। फोटोग्राफी के प्लेट में बैंगनी पार के प्रकाश का प्रभाव काफी प्रबल होता है। एक बार ऐसा जान पड़ा था कि ये अदृश्य प्रकाश रंगिन दल के ही पार्श्वचर हैं जो अंधेरे में जा पड़े हैं। किन्तु ज्यों ज्यों इस गुप्त प्रकाश की खोज आगे बढ़ती गई त्यों त्यों सतरंगे दल का आसन छोटा होता गया। विज्ञान की पैमाइश में प्रकाश की सीमा आज सतरंगे राजा के देश से साँगुना अधिक बढ़ गई है। लाल



पार-के प्रकाश की ओर क्रमशः जो तरंग दीर्घ पड़ी है वही तरंग आज उस आकाश राणी को ढोती चल्ती है, जिसे 'रेडियो-प्राना' कहते हैं। इसी तरह रेगी पार की ओर सुप्रसिद्ध रेड गैस प्रकाश प्रकट हुआ जिसकी सहायता से रेह के चमड़े का पर्ना भद कर भीतर का हाड दिगार्ह देना है।

प्रकाश से कुछ तक्षत्रों के अस्तित्व की ही ग्यर नहा मिश्री प्रल्लि उस की छाती फाटकर भनुयने यह ग्यर भी प्रसू कर ली है कि इन तक्षत्रों में कौन कौन से पदार्थ हैं। यह घसरी कैसे हुई, जरा समझा के रहा जाय—

तिकोने काच के भीतर से जल ग्यर का सफेद प्रकाश निकलता है तो उसके एक के बाद दूसरे सात रंगों का परिचय मिल जाता है। गेहा धीरे धीरे पदार्थ काफ़ी गम हो कर जल जल उठते हैं और उनका रंग जल क्रमशः सफेद हो जाता है तो इस स्येत प्रकाश को भाग करने पर सातों रंगों की छटा एक दूसरे से सटी हुई दिखने लगती है। उनसे भीतर धौड़ फाक नहीं रहता। किन्तु गेहा को गर्म करते करते जल वह इतना गर्म हो जाता है कि गैस बन जाय तो फिर तिकोने काँच के भीतर से उससे प्रकाश को भाग करने से धणच्छटा में अत्रि निउत्र प्रकाश नहीं मिश्रता। अलग अलग केन्द्र उज्ज्वल रेखायें और उनसे बीच बीच में प्रकाशहीन रंगी जगहें दिगर्ती हैं। इस प्रकार रेखाओं का जो चिह्न पट जाना है उसे 'प्रणत्रिपि' नाम दिया जा सकता है।

इस लिपि में देखा गया है कि दीप्त गैसीय जलमा में प्रत्येक पदार्थ के प्रकाश की वर्णच्छटायें अलग अलग हैं। नमक में सोडियम नामक एक मौलिक पदार्थ पाया जाता है, नाप दे दे कर उसे गैस कर दिया जाय तो उसकी वर्णलिपि में उसके प्रकाश के भीतर गूँघ नजदीक ही नजदीक दो पीली रेखायें दिखाई पड़ती हैं, और कोई रंग नहीं दिखाइ देता। सोडियम के सिवा अन्य किसी पदार्थ की वर्णच्छटायें में ठीक उसी स्थान पर उसी प्रकार की दो लकीरें नहा मिलतीं। इस लिये उस प्रकार की दो लकीरें जहाँ कहीं के भी गैस में मिले, समझ लेना होता कि निश्चय ही वहाँ सोडियम मौजूद है।

लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि देखा जाय वर्णच्छटायें में सोडियम गैस की इन दो उज्ज्वल पीत रेखाओं की चोरी हो गई है और उन की जगह पर काले धात्रे दिग्य रहे हैं। विज्ञानी कहते हैं कि किसी उत्तम गैसीय पदार्थ का प्रकाश उसी गैस के अपेक्षाकृत ठंडे स्तर को भेद करके जाता है तो नीचे का ठंडा स्तर उसे पूरी तौर से सोख लेता है। लेकिन यह बात नहीं है कि इस प्रकाश के अभाव में ही कुछ काले दागों की सृष्टि हुई हो। वस्तुतः जो गैस इस प्रकाश को रोकता है वह भी अपने उत्ताप के मुताबिक प्रकाश बिपेर देता है, लेकिन उत्ताप की कमी के कारण इस का प्रकाश कुछ मलिन होता है। यही मलिन प्रकाश वर्णच्छटायें में उज्ज्वल प्रकाश के पाम रहने के बाला मालूम होता है।

नितो भा मौलिक पदार्थ है, उनका प्रकाश तोड़ कर प्रत्येक का घर्णच्छटा का पद तैयार कर लिया गया है। इस घर्ण भेद की पुग्ना करने से ही तन्तु भेद प्रकट हो जायगा, फिर यह ज्ञात करी भी क्यों न हो। तब, गैर्भाय अग्र्या में उसका रहता करी है।

पृथ्वा पर जिस ६२ मौलिक पदार्थों का तयार मिला है, सूर्य में उन सब का रहता उचित है क्योंकि पृथ्वी तो सूर्य के धूल से उत्पन्न हुई है। पहली परीक्षा में पेश ३१ ही पदार्थ मिले थे, शरीर का बना हुआ, इस प्रश्न को भारतीय विद्वानों मधनाद ग्वाहा ने हल किया है। क्या अनुसंधान मार्ग निष्काट कर उन्होंने ने सूर्य में और वह मौलिक पदार्थों का पता लगाया है। उनके मुक्ताये गस्ते में प्रायः सभी मौलिक पदार्थों की तयार मिल गई है। आज भी जो लापता है उसका संवाद पृथ्वीका धातु मण्डल बीच गस्ते में ही खोज लेता है।

सब रंग मिल कर सूर्य का रंग सदा है फिर क्या कारण है कि हम नाता तन्तुओं में नाता रंग देखते हैं। यात यह है कि यत्तुयें सब रंगों को अपने भीतर ग्रहण नही कर सकती, किसी किसी को बिल उज याहर निदा कर देती हैं। यह लौटाया हुआ रंग ही हमारी जागो का तयार है। मोटा ज्यार्डिंग पेपर जिस रस को सोख लेता है वह किसी का भोग्य नहीं होता, जिस रस को वह ले नहीं लेता वही बचा हुआ जूठा रस हमारा प्राप्य है। यह भी ऐसा ही है। बुद्धी सूर्य के विरणा

के सभी रंगों को मान लेती है, फिर देती है केवल लाल रंग को। उस के इस त्याग के उा से ही चुम्बी की इतनी शक्ति है। जो ( रंग ) उसने आत्मसात् कर लिया है उसकी कोई व्याप्ति नहीं। चुम्बी केवल लाल रंग को ही क्यों नहीं ग्रहण करता है और नीलम का नील रंग के ऊपर ही इतना चिन्मय वैराग्य क्यों है, इस प्रश्न का जवाब उनके परमाणुओं की दुनिया में छिपा हुआ है। सूर्य के रंगों की तरंगों को पके केश लौटा देने से इसीलिये वे सफेद दिखते हैं और काले केश किसी रंग को नहीं लौटाते इसी लिये वे काले हैं। जगत् की सभी चीजें अगर सूर्य के सब रंगों को ग्रहण कर जाती, आत्मसात् कर लेती, तो वृषणों की यह दुनिया एक दम काली दिग्राई देती अर्थात् दिखाई ही नहीं देती। मानो पोस्टमास्टर चिट्ठी रॉटने वाले सातों हरफारों को कैद कर लेता। और यदि ये पदार्थ किसी भी प्रकाश को ग्रहण न करते तो सब कुछ सफेद दिखता, और उस एकाकार जगत् में सब पदार्थों का भेद ही मिट जाता। मानो सातों हरफारों की सब चिट्ठियाँ रम्सी की तरह घँट कर एक कर दी जाती और कोई स्वतंत्र खग ही न मिलती। सब को एक ही चेहरे में देखने को देयना वहीं कहा जा सकता, हम दृष्टे प्रकाश के मेल जाल में चीजों को देखते हैं।

पके केश सफेद क्यों दिखाई देते हैं, यह सहज बात भी जो पूछने की चीज है, यह बात हमारे मन में आती भी नही। लेकिन छोटा, बड़ा, सहज, कठिन, सब बातों का जवाब तत्त्वज्ञान

काने के काम में शिवान गंगा हुआ है। ऐसे केश सफेद हैं, इसीलिये सफेद दिगो है, इसी प्रकाश की धोखा गरी युक्ति है पर हमारी बुद्धि ने जय तर मा को शान्त कर गया था। यिन्ना ने कहा, यह उत्तर आगमनाक हो सकता है किन्तु मन्तोष जनक नहीं है। बड़े आदर्मा के मानस पर कौन सी घटना घटती है और तब केश सफेद होने लगते हैं, इस बात की गोज करने के लिये बुद्धि को प्रायः साढ़े मौ कसोड मील दौड़ाना पड़ता है। यहाँ अत्यन्त प्रशण्ड और प्रचण्ड आग्नेय गैस के उत्स से जिस नेत्र की धारा बगी आ रही है वह घूट के केश में गा कर टकराई, और प्रतिक्षण उससे टकरा कर लौट आने लगी, इसा गैटने प्रकाश में केश सफेद दिगाई देते लगे। क्यों यह प्रकाश लौट आता है, मालूम नहीं। किन्तु यह अत्यन्त छोटी घटना शिव के कितनी बड़ी घटना के साथ नित्य ही योग युक्त है यह सोच कर अचक् हो रहना पड़ता है। तसवार में ऐसा कुछ भी नहीं है जो सब से म्यतंत्र हो कर अपने आप घट रहा हो, जिस का हिसाब सारे जग्राण्ड में कहा भा न मिलता हो।

सूर्य विगर्णा के साथ लिपटी हुई ऐसी अनेक तरंगे हैं, जो अति अल्प परिमाण में आती हैं और इसी लिये हम उन्हें अनुभव नहीं कर सकते। ऐसी भी तरंगे हैं जो आती तो काफी मात्रा में हैं पर पृथ्वी का वायुमण्डल उन्हें बीचहा में रोक रखता है। नहीं तो हम जग कर मर जाता पड़ना। सूर्य का जितना

दान हम उर्दाग्त कर सकते हैं, पहले से ही उसके साथ हमारे देहतन्त्र का समझौता हो गया है। उस के बाहर हमारी जीवन यात्रा का काय्यार बन्द है।

इस त्रिध्वरूपी चित्र में जो चीज सत्र से अधिक हमारी आखों को आकृष्ट करती है वह है नक्षत्रलोक और सूर्य, जो स्वयं एक नक्षत्र है। इतने दिनों तक ये ही मनुष्य के मन में प्रगलनता पाते आये हैं। वर्तमान युग में मनुष्य को सत्र से अधिक आश्चर्य में डाल दिया है इस त्रिध्व के भीतर छिपे हुए त्रिध्व ने, जो अतिशय सूक्ष्म है। यह जासूस से नहीं देखा जाता फिर भी वास्तव में समस्त सृष्टि के मूल में है।

एक मिट्टी के घर को ले कर यदि हम जाँच करे कि उस के मूल में क्या वस्तु है तो कुछ धूलके कण मिलेंगे। इन कणों को नोटने पर जत्र और टुकडे नहीं हो सकेंगे तो हम कहेंगे कि ये कण ही मिट्टी के घर के मौलिक मसाले हैं। मनुष्य ने एक दिन ऐसा ही सोचा था। विध्व के पदार्थों के टुकडे करते करते जत्र इतने सूक्ष्म टुकडे हो जाँयगे कि उन्हें और अधिक न तोडा जा सके तो इही को विध्व के आदिभूत अर्थात् मौलिक सामग्री कहेंगे। हमारे शास्त्रों में इसे परमाणु और यूरोपीय शास्त्र में आटम कहते हैं। ये इतने सूक्ष्म हैं कि दश करोड परमाणुओं को एक पर एक सजाने से उनका माप केवल एक इंच होता है।

सहज उपाय से धूल के कणों को हम जत्रिक भाग नहीं

फिर भा पनिटिप् के प्रति पजिटिव की और नेगेटिव के प्रति नेगेटिव की आसनि नहीं है। इनका आकर्षण विपरीत पक्ष की ओर ही होता है।

इन दो जातियों के अति सूक्ष्म कणों के झुण्ड मिल कर ही परमाणु हुए हैं। इन दो पक्षों को लेकर प्रत्येक परमाणु मन्तों सय और ग्रहों के मिलित सौरमण्डल के समान है। सूर्य जिस प्रकार सौर-लोक के केंद्र में रह कर आकर्षण के लगाम से पृथ्वी को घुमा रहा है, पनिटिव चैद्युत कण भी उसी प्रकार परमाणु के केन्द्र में नेगेटिव कणों को गीच रहा है और वे सर्वस के घोटों की तरह लगामधारी पजिटिव के चारों ओर चकर मार रहे हैं।

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर नौ करोड़ मील दूरी रख कर नजर काट रही है। जायतन की तुलना करके देखा जाय तो अति परमाणुओं के वक्षपथ का दूरत्व अनुपात में उस से अधिक ही है, कम नहीं। परमाणु जिस अणुतम आकाश को अधिकार किये है, उसके भीतर भी दूरत्व की बहुत कमी-बेशी है। पहले ही नक्षत्रलोक में के बृहन्व और अति विशालता की बात कह चुका हूँ, किन्तु अत्यन्त छोटे को भी 'अत्यन्त विशाल छोटा' कह सकते हैं। जिस प्रकार बृहन् विशालता की सीमा को सत्या चिह्न से घेरने पर एफ के बाद तीस पचास एक घैठाने होते हैं, शुद्धतम विशालता के विषय में भी यह एक ही बात ठीक है। उस की सत्या की फौज भी लगी बतार

चाँध कर खड़ी होती है। परमाणु के अति सूक्ष्म आकाश में अति परमाणु गण जिस दुर्ग पग चक्कर मार रहे हैं उस की उपमा देते हुए एक विख्यात ज्योतिषी ने कहा है कि हाथड़ा स्टेशन की ओर सर चीजें हटा कर केवल ७ ६ घर छोड़ दिये जाय तो उसी के साथ परमाणु के आकाश में स्थित अति परमाणुओं की तुलना हो सकती है। किन्तु इस व्यापक शून्य के भीतर कई दूरतों चंचल पदार्थों को रोक रखने के लिये परमाणु के केन्द्र वस्तु का समस्त भार सारा कार्य कर रहा है। यह न होता तो परमाणु जगत् तहस-नहस हो जाता और परमाणुओं से गठित इस विश्वजगत् की दृष्टि ही न रहती।

अब हाईड्रोजन गैस के परमाणुओं की दुनिया में दृष्टि दी जाय।

इस से अधिक हल्का गैस दूसरा नहीं है। इस के परमाणु केन्द्र में केवल एक वीद्युत ऋण विराज रहा है जिस की जाति को प्रोटन कहते हैं और इसी के आकर्षण में बद्ध हो कर एक छोटी सी कणिका उसके चारो ओर चक्कर मार रही है, इस की जाति को इलेक्ट्रॉन कहते हैं। प्रोटन पजिटिव धर्मी है, इलेक्ट्रॉन नेगेटिव धर्मी। नेगेटिव इलेक्ट्रॉन चटुल-चञ्चल है और पजिटिव प्रोटन धीर-गमीर। इलेक्ट्रॉन के वजन की तो कुछ गिनती ही नहीं, परमाणु का समस्त भार उसके केन्द्र वस्तु में जमा हुआ है।

मोटी

सब इलेक्ट्रॉन ही ना धर्मी है, परन्तु



जाति के ऐसे भी इलेक्ट्रन गिरफ्तार किये जा सकें हैं जो हाँ-धर्मो हैं, फिर भी नया वनन इलेक्ट्रन के सम न ही है। इन का नाम रखा गया है पाजिट्रन।

पहले ही ज्ञात हुआ है कि दो विपरीत धर्मों के त्रुटों में परस्पर साठगाँठ रहती है परमाणु केन्द्र के प्रोटन अपने कक्ष पथ के इलेक्ट्रनों की गीच पर परस्पर मिल जा सकते थे—परन्तु लिये मित्र नही पाते कि इलेक्ट्रन के दौड़ने का जो प्रचण्ड वेग है वही प्रोटन के आकर्षण के जोर को एक सीमा में रोक सकता है, मयादा का उत्पन्न नहीं होने देता। इलेक्ट्रन के दौड़ने का वेग प्रति सेकेंड  $1.3 \times 10^8$  मील है। सूर्य और पृथ्वी में भी यही व्यवहार है। पृथ्वी के दौड़ने का वेग अगर अन्यन्त अधिक बढ़ जाय तो वह सूर्य के आकर्षण से अपने काँ छिड़-का कर छूट भागे और अगर दौड़ने का वेग अन्यन्त शिथिल हो जाय तो सूर्य ही उसे हटप ले। परमाणुलोक में दौड़ने के आकर्षण का जो नियम रखा है उस से इलेक्ट्रन मटली से बाहर निकल कर नही जा सकता और फिर प्रोटन भी इलेक्ट्रन के प्रदक्षिणपथ की मयादा की रक्षा करता रहता है।

कभी कभी देखा गया है कि एक विशिष्ट प्रकार के हाँ-डोजन या परमाणु साधारण परमाणुओं से दृढ़ भारी है। परीक्षा करके दृढ़ा गया कि केन्द्र में प्रोटन के साथ उसका एक तीव्र सहयोगी भी है। पहले ही कहा गया है कि प्रोटन हाँ-धर्मो होता है। उसके केन्द्र का जो सामेंदार है उसकी जाँच

करने से मालूम हुआ कि वह साम्यधर्मों है, न हाँ धर्मों और न ना धर्मा। इसी लिये उस में कोड वैद्युत धर्म नहा है। उसका वजन अपने सगी प्रोटन के बराबर ही है किन्तु प्रोटन जिस प्रकार इलेक्ट्रन को खींचता है, यह वैसा खींच नहीं सकता, और फिर प्रोटन को धक्का मार कर गिर, देने की को शिश भी नहीं करता। इस कण का नाम न्यूट्रन रखा गया है। ऐसा भी हाईड्रोजन पाया गया है जिसका वजन तीन गुना अधिक है। अर्थात् उसके परमाणु में एक प्रोटन और दो न्यूट्रन हैं। एक बात लक्ष्य कर के देगी गई है कि एक प्रोटन केवल एक ही इलेक्ट्रन पर शासन रख सकता है। अन्य जाति के कणों की दृष्टि से परमाणु को जितना भारी भी क्यों न कर दिया जाय, इलेक्ट्रन के ऊपर उसका जोर नहीं चलता। परमाणु के केंद्र में प्रोटन की संख्या जिस परिमाण में अधिक होगी उसी परिमाण में वे इलेक्ट्रन को पकड़ में रख सकते हैं। ऑक्सीजन गैस के परमाणु के केंद्र में आठ प्रोटन रहते हैं, और साथ में आठ न्यूट्रन भी रहते हैं, किसी किसी जगह दस दस, किन्तु तौभी प्रदक्षिणकारी इलेक्ट्रनों की संख्या ठीक आठ ही रहती है।

पॉजिट्रि और नेगेट्रि जहाँ पर यथा परिमाण मिल कर संधि करने शान्ति पूर्वक रह रहे हैं वहाँ यदि किसी उपाय से गृह-विच्छेद प्रद. दिया जाय, अर्थात् कुछ नेगेट्रियों को निकाल बाहर किया जाय तो वह प्रत्यु वैद्युत के परिमाण के हिसाब से वेमेल

हो जायगी और पवित्र वैद्युत का चार्ज अतिरिक्त हो उठेगा। स्त्री पुरुष मिल कर जहां गृहस्थी सामंजस्य पूर्ण ढंग से चला रहे हैं, वहां से स्त्री का प्रत्याय जिस परिमाण में हटा दिया जायगा उसा परिमाण में वह गृहस्थी पुरुष प्रधान हो उठेगी, यह भी घंटा हा है।

इलेक्ट्रिसिटी के प्रयोग में यह 'चार्ज' शब्द सदा व्यवहार किया जाता है। साधारणतः जिन चीजों को हम व्यवहार में लाने हैं उन में वैद्युत की छुटपटाहट नहीं देनी जाती, वे चार्ज किये हुए न हो, अर्थात् दो जाति के वैद्युत जिस परिमाण में परस्पर मिलन कर शान्ति पूर्वक रहा करते हैं, वह परिमाण हम में है। किन्तु किसी चीज में कोई एक वैद्युत यदि सन्धि न मान कर, अपने निर्दिष्ट परिमाण को अतिराम कर और मर्यादा मानना न चाहे तो उस वैद्युत के द्वारा वह घमनु चार्ज की गई है, ऐसा कहा जाता है।

एक दुम्पा रेशम लेकर काच पर रगड़ा गया। नतीजा यह हुआ कि रगट पा कर काँच में से कुछ इलेक्ट्रन निकल आये, उनकी रफ्तार हुई रेशम में। काच में नेगेटिव् के कम होते ही पवित्र की प्रधानता हो गई, उधर रेशम में नेगेटिव् वैद्युत का प्रभाव बढ़ गया, अब यह नेगेटिव् वैद्युत के द्वारा चार्ज कर दिया गया। काँच में इलेक्ट्रिक की कमी पड़ गई थी, उसने अपने पवित्र चार्ज के भोज में रेशम को पान लेना चाहा, उधर नेगेटिव् की भाँट घाले रेशम का पिचारा

काँच की ओर हुआ। काँच या रेशम का साधारण तत्र जत्र अभ्रुण था, तत्र तक वे अपने आप में ही सहज थे, शान्त थे। शान्त अवस्था में इन में वैद्युत का अस्तित्व छात ही नहीं होता था। ज्यों ही राह के वैद्युतिक गृह पिंप्र की गरम मालूम हो गई त्यों ही भाग घंटारे की असमानता ने क्षोभ पैदा कर दिया।

काँच या अन्य किसी पदार्थ से रगड़ के द्वारा मामूली परिमाण में इलेक्ट्रन निकाल लेने की बात मैं ने कही है। यदि बिज्ञानी ने पूछो कि यह परिमाण कितना है तो वे गर्दन हिला कर कहेंगे, रगड़ की मात्रा के अनुसार चालीस, पचास, साठ फरोड तक हो सकता है। विजली बत्ती के पलीते के तार में से जत्र इलेक्ट्रन की ठसाठस भीड़ दौड़ती रहती है तभी वह जलता है। उसके इस प्रान्त से उस प्रान्त तक जितने इलेक्ट्रन एक साथ यात्रा करते हैं उस सख्या का हमारे गणितशास्त्र में क्या नाम है, यह बात मैं तो नहीं जानता। जो हो, यह देखा गया कि अति परमाणुओं का दुरन्त चाञ्चल्य पजिट्रि और नेगेट्रि की सन्धि से सयत हो रहा है, इसी लिये इस विश्व में शान्ति है। भालू वाला मझरी उमरू प्रजाता है और उस के प्रत्येक ताल पर भालू नाचता और नाना खेल दिपाता है। यदि उमरू वाला न हो, और पालतू भालू यदि पधन तोड़ कर अपने स्वधर्म में आ जाय तो फिर काट कर और नोच कर चारी ओर जनर्थ कर डाले। हमारे सारे शरीर में और देह के बाहर भी इस पालतू विभीषिका के द्वारा किसी अदृश्य उमरू के छद्म (ताल) पर सृष्टि

का नाच और गेल चर रहा है। सृष्टि के अखाड़े में दो गिलाड़ी गेल रहे हैं और अपने भीषण दृढ़ के समग्र से त्रिभुवगचर की गममृमि को गम कर रग, है।

सुत्रियान अग्रज विज्ञानी गगफोड ने परमाणु रहस्य को सौर मण्डली के साथ तुलनाय करने प्रताय, कि परमाणु को घेर कर भिन्न भिन्न चर पथ ( ४ त-मार्ग ) में श्लेषद्रवों के चर चर रह रहे हैं। एक और पद्धति ने साधित किया कि चर मारने वाले श्लेषद्रव कक्ष पथ से दृढ़ कर दूसरे कक्ष पथ में जा कर स्यात बदल करने हैं, और फिर अपने निर्दिष्ट रास्ते पर लौट जाने हैं। इस उड़ल दृढ़ के समय ही डामें से किरण प्रकीर्ण होती हैं। सूर्य के परमाणु या जगता हुआ पलीता इस दृढ़ने वाले श्लेषद्रव की चमक से ही प्रकाश फैलने हैं। गत में एक गणित विज्ञानी ने सिद्ध किया कि इन कुदने वाले और चर मारने वाले श्लेषद्रवों की गति में एक प्रकार की तरंग गम करती है। इस प्रकार कुदने, उड़कने और लहगने के योशानीत व्यापार को ले कर परमाणु की स्थिति है।

पहले ही ज्ञात चुका है कि एक समय के विज्ञानी लोगों ने गुरु दृढ़ता के साथ ही प्रोपित किया था कि ६० जाति भूत ही त्रिभुवसृष्टि के मौलिक पदार्थ हैं, जति परमाणुओं की सारी ने इस ज्ञान को अप्रमाणित कर लिया, तभी उनसे सम्मान की उपधि आज भी रह ग है, हम आज भी उनको मौलिक पदार्थ ही कहने हैं।

एक ऐसा भी समय था जब कि इन मौलिक पदार्थों के सन्तुष्ट में यह मशहूर था कि उनके गुणों में नित्यता है। उन्हें जितना भी क्यों न तोड़ा जाय उनका स्वभाव नहीं बदलता। विज्ञान के नये अध्याय में देखा गया कि उनका चरम भाग फिया जाय तो दो जाति के यैद्युतों का शुष्म नृत्य निकल पड़ता है। जिन्हें मौलिक पदार्थ कहा गया है उनके स्वभाव के विशेषत्व को इन्हीं यैद्युतों ने विशेष सत्या में णरुत्र हो कर रचा रखा है। अगर यहीं रखा गया होता तोभी परमाणुओं के रूप नित्यता की शुद्ध्यत टिक जाती। किन्तु उनके अपने दल से ही विरुद्ध गगार्ही मिली है। देखा गया है कि जो परमाणु हलके हैं उनमें भीतर इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन का चकर मारना नित्य नियमित भाव से ही चला जा रहा है। किन्तु जो अत्यन्त भारी है, जिन में न्यूट्रॉन प्रोटॉन सब की दसा उस भीड़ बहुत अधिक है, जैसे यूरेनियम या रेडियम, वे अपनी पूर्जा समझाल नहीं सकने। सदा सर्वदा ही उनकी मूल पूर्जा छिटकती रहती है और हरके हो कर वे एक रूप से दूसरा रूप धारण करते रहते हैं।

जब तक रेडियम नामक एक मौलिक धातु स्थूल आवरण में छिपा हुआ था। उसके आविष्कार के साथ ही साथ परमाणु का गुद रहस्य मालूम हो गया। विज्ञानियों के साथ उसका जो पहला मुकाबिला हुआ उसका इतिहास याद रखने लायक है।

हाँगी वेकरेल पैरिस यूनिवर्सिटी स्कूल में विज्ञान के अध्या

पर थे। एक दिन संयोग वश उन्होंने अपनी प्रयोगशाला में एक टुम्डा यूरेनियम धातु एक फोटोग्राफी के प्लेट पर रख दिया था। दो सप्ताह बाद उही प्लेट ले कर उन्होंने अपने सहजारी को उस का चित्र लेने के लिये लिया। देखा गया कि प्लेट के बीच में काफी बड़ा एक प्रकाश का चिह्न पड़ा हुआ है। यूरेनियम के टुकड़े से ही अदृश्य प्रकाश विकीर्ण हो कर प्लेट पर गिरफ्तार हुआ है। इस बात का निस्संदेह प्रमाणित क्रिये बिना वे कोई मत फिर न कर सके। उस समय वे अन्य प्रयोगों में उलझे हुए थे। इस लिये इस प्रयोग की परीक्षा का भार उन्होंने अपनी असामान्य बुद्धिमती छात्री मैडम कुरी के ऊपर दिया। यह महिला फ्रांसीसी विज्ञान विद्यालय में अपने पति अध्यापक पियर कुरी की सहयोगिनी हो कर प्रयोग परीक्षा का काम करती थीं। दोनों पति पत्नी मिल कर इस अज्ञात धातु की खोज में लगे गये। अपनी अपने की जरूरत थी, फिर भी वे बर्ज लेने में कुठित नहा हुए। अद्रिद्या से २६ मन का एक धातु पिण्ड सराद लाये, इसे पिचब्लैंड कहते हैं। यूरेनियम एक त्रिमिश्र यनिज पदार्थ है। पती पती इसके शोधन और विश्लेषण के कार्य में जुट गये। प्रातःकाल से ले कर आध्या रात तक काम करते करते साल गुजर गया। सांसात्तिक बाधाएँ भी कम नहीं आईं। अन्त में परीक्षा की प्रणाली से यनिज वस्तु जय विसर्ते घिसाने इतना सूक्ष्म हो गया कि सुर्दवीन बिना देखा न जा सके, तब एक दिन सायंकाल अपनी प्रयोगशाला में प्रवेश

करके देगा कि परीक्षा में उंचे हुए उस पदार्थ में ट्रीप्ति निकल रही है। इस उज्ज्वल पदार्थ के मांतर में मैटम कुरी ने प्रिशुज रेडियम के फइ दाने चुन लिये। और भी पाँच वर्ष तक साधन और आलोचना करने के बाद अन्त में उन्होंने रेडियम के सन्ध में लियी हुई अपनी रचना परीक्षक समिति के हाथ में दिया। शीघ्र ही सारे समाज में यह विस्मयकर समाचार घोषित हुआ। उन्होंने सत्र में अधिक विस्मय जिन रात से हुआ वह था इस धातु का अद्भुत स्वभाव। यह अपने आप में से उद्योतिष्कण प्रकीर्ण कर अपने को नाना मौलिक पदार्थ में रूपान्तरित करता हुआ आगिरकार सीसा हो जाता है। इन्ने मानों एक वैज्ञानिक इन्द्रजाल कह सकते हैं। यह रात पहले पहल जानी गई कि एक रात से दूसरे रात का उद्भव हो सकता है।

जो पदार्थ रेडियम की जाति के हैं, अर्थात् तेज छिटकाना ही जिन का स्वभाव है, वे सभी जाति को देने वाले दल के हैं। वे सदा ही अपने तेज का मूल धन खर्च करते रहते हैं। इस अपव्यय की सूची में जो तेज पदार्थ पहले पड़ता है, उसका नाम ग्रीक वर्णमाला के प्रथम अक्षर के नाम पर आरफा दिया गया है। हिंदी वर्णमाला के हिसाब से उम्मे क कह सकते हैं। यह पजिट्रि जाति का एक परमाणु है। नवीन उद्भावित एक यत्र के आकाश में जब इसे दौटाया गया तो उस यत्र की भीगी हवा के कणों को प्रबल वेग से जाघात पहुँचा कर इसने



जला दिया। यह जो रास्ता जग उठा उसी के मार्ग में उसके परिचय का लेपन होगा अफिन हों गइ। छिटका घर फेंका हुआ तेज का एक और कणा है, इसका नाम दिया गया है यीटा, हिंदी में यह कह सकते हैं। यह नेगेटिव चार्ज किया हुआ इलेक्ट्रॉन है। इस का घेग प्रचण्ड है। चग्ने के रास्ते में एक पतला कागज रख देने से आक्सा परमाणु का देहांतर लाभ होता है, अथवा यह हालियम गैस बन जाता है। यीटा को राखने के लिये दो कागज लगते हैं। रेडियम के तृणीक में इन दो के मिला एक और घन्तु है। उसका नाम है गामा। यह परमाणु या अति परमाणु नहीं है एक विशेष प्रकार की प्रकाश किरण है। उसका किरण श्थूल घन्तु को भेद सकती है, जैसा कि रेडियो किरण करती है।

परमाणु के पिण्ड में जब तक कोई नुस्सान नहीं होता तब उसकी विशेषता अध्याहत रहती है। उसके सीमान्त में यदि दो चार इलेक्ट्रॉन छीन लिये जाय तो उसके के निर्निष्ट चैद्युतों की सख्या में कुछ कमी पड़ सकती है किन्तु यह कमी घातक नहीं होती। यदि उसके केन्द्रवन्तु के पास प्यजाने में लूट पाट सम्भव हो तभी उस परमाणु की जाति बदल सकती है। दृष्टांत दिखाया जाय। एक गैस के आधार में केवलमात्र नाइट्रोजन था। उस में जाफा कणिका दाँडाई गयी; इस ने नाइट्रोजन परमाणु के केन्द्र वन्तु में धक्का मारा। उसकी प्रोटन संस्थिति हिल गई इस प्रकार वह हाइड्रोजन और अविसजन

गैस में रूपान्तरित हो गया। कैसे हुआ वह भी बता दू।  
आल्फा कणिका के प्रचण्ड आघात से नाईट्रोजन के केन्द्र में स्थित प्रोटन-स्थिति से एक प्रोटन छिटक कर बाहर निकल गया।  
आल्फा कणा ने उसे हटा तो दिया किन्तु स्वयं जा फंसी  
उन्हीं वल में। इससे उनका वजन बढ़ गया और वे दो गैसों का  
रूप धारण कर गये।

इसी लिये विज्ञानियों ने पहले आशा की थी कि तेज का चार  
करने वाले इस रेडियम गोलदाज को परमाणु केन्द्र की पूर्वी  
लट्टक की राहजनी में नियुक्त करेंगे। लेकिन लक्ष्य अत  
सूक्ष्म है और निशाना मारना सहज नहीं है। तेज के अनेक  
ढेले मारने के बाद संयोग वश एक लग गया तो लग गया।  
इसी लिये इस प्रकार की अनिश्चित लड़ाई के बदले आज फल  
विशाल यत्र तैयार करने का आयोजन चल रहा है, ताकि  
अति प्रचण्ड शक्तिशाली वैद्युत पैदा हो कर परमाणु के केन्द्र  
दुर्ग के दुर्भेद्य पहरे को भेद सके। उदा प्रचण्ड शक्ति  
का पहरा है। आज जिस समय लाख लाख मनुष्यों को  
मारने के लिये महामारी यंत्रों का उद्घावन हो रहा है ठीक  
उसी समय विश्व के सूक्ष्मतम पदार्थ के अलक्ष्यतम मम को  
विदीर्ण करने के लिये विराट् वैद्युत चर्पणी का कारखाना  
चलने जा रहा है।

पहले ही कहा है कि आल्फा कणा स्वरूप खो कर के  
हीलियम गैस हो जाती है। इसको पृथ्वी की उमर तै करने के

काम में लगाया गया है। जिसा पहाड़ के एक पत्थर में यदि मामूली मात्रा में भी हीलियम गैस पाया जाय तो इस गैस का परिणति में जो निर्दिष्ट समय लगता है उस का हिसाब कर के उस पहाड़ का जन्म कुण्डली तैयार की जा सकती है। इसी प्रणाली से पृथ्वी की उमर का ज्ञान किया गया है।

उत्पन्न के भारीपा में हाइड्रोजन गैस के टुक ऊपर के पानी में जो गैस है उस का नाम हीलियम गैस रखा गया है। यह गैस विज्ञानियों की दुनिया में नया ही जाना गया है। यह पहले पहल मृग ग्रहण के समय मान्य हुआ था। सूर्य अपने चर की सीमा गतिप्रम कर के गगनों कोस दूर तक जग्ने हुए गण्य का अति सूक्ष्म उत्तरीय चादर (चादर) उड़ाया करता है, जिस प्रकार भ्रमना अपने चारों ओर जलकण या चुहक फैला देता है। इसी त्रिये ग्रहण के समय दूरबीन से उसने चारों ओर के आग्नेय गैस का विस्तार दिखाई पड़ता है। इस दूरविक्षित गैस की क्षति को यूरोपीय भाषा में फरोना कहा जाता है, लिंदा में इसे किर्रीटिका कह सकते हैं।

कुछ दिन पहले सन् १९३७ ई० के सूर्य ग्रहण का सुयोग पा कर जब इस किर्रीटिका की परीक्षा की गई तो उस समय चर लिपि की नील सीमा की ओर तीन अद्भुत सफेद लकीरें दिखाई दीं। पंडितों ने सोचा कि सूर्य संभव यह कोई आगे का जाना हुआ ही पदार्थ है जो अग्नि जलने के कारण नई

दशा को प्राप्त हो गया है, और यह उसी का चिह्न है। या बहुत सभ्य, कोई नया पदार्थ ही जाना गया। अब भी उसका कुछ पता नहीं चला।

सन् १८६८ ई० के ग्रहण के समय भी विज्ञानियों को एक ऐसा ही आश्चर्य हुआ था। सूर्य के गैस के घेर में से एक ऐसे पदार्थ की लिपि प्राप्त हुई जिसे तब तक कोई जानता नहीं था। इस नये जाने हुए पदार्थ का नाम दिया गया हीलियम अर्थात् सौरक क्योंकि उस समय सोचा गया था कि यह गैस अकेले सौरमण्डल में ही है। बाद को १० वर्ष बीत जाने पर विख्यात विज्ञानी रैमजे ने इस गैस के अस्तित्व का पता अति सामान्य मात्रा में पृथ्वी के वायुमण्डल में पाया। उस समय स्थिर हुआ कि यह गैस पृथ्वी पर दुर्लभ है। इस के बाद देखा गया कि दक्षिण अमेरिका के किसी मिट्टी के तेल के पदान में जो गैस पाया जाता है उस में हीलियम काफी मात्रा में मिलता है। फिर तो इसे काम में लगाने में सुविधा हुई। अत्यन्त हल्का होने के कारण बहुत हाल तक हाईड्रोजन गैस ही हवाई जहाज उड़ाने के काम में लाया जाता था। लेकिन हाईड्रोजन गैस उड़ाने के लिये जिस प्रकार आसानी से काम देता है, जला देने में भी उस से कम नहीं है। इस गैस ने अनेक बड़े बड़े हवाई जहाजों को जला कर राख कर दिया है। हीलियम गैस में उस छिपी हुई प्रचण्ड ज्वलन चण्डी का निवास नहीं है। हाईड्रोजन को छोड़ कर अन्य सभी

यह गरिब हन्का है। असा लिये जहान उठाने के काम को निरापद बनाने के लिये अब इसी का व्यवहार होने लगा है। चिन्मिता के लिये भी किसी किसी गेग में इस का प्रयोग शुरू हुआ है।

पहले हा बताया गया है कि पजिटिव चार्ज वाले और नेगेटिव चार्ज वाले पदार्थ परस्पर एक दूसरे को अपनी ओर खींचते हैं। लेकिन एक ही जाति के चार्ज वाले पदार्थ एक दूसरे को ठेल कर फेंक देना चाहते हैं। उन्हें जितना ही नजदीक किया जाता है उन्हे ठेलने का प्रेग उतना ही उग्र हो उठता है। इसी प्रकार विपरीत चार्ज वाले परस्पर जितने ही नजदीक आते जाते हैं उतना ही उनके आकर्षण का जोर बढ़ता जाता है। इसी लिये जो प्लैक्टन केन्द्र वस्तु के पास रहते हैं वे आकर्षण के प्रेग में उबने के लिये और तेजी से दौड़ा करते हैं। सौर मण्डल में भी जो ग्रह सूर्य के जितने ही निकट हैं वे उतने हा तेज दौड़ते हैं। दूर के ग्रहों को विपत्ति का डर कम रहता है, वे बहुत कुछ धार भाव में, निर्माना के साथ, चलते हैं।

दो प्रोटनों की पारस्परिक त्रिभुजता का जोर समझाने के लिये रसायनिक पंडित फ्रेडरिक माडी ने हिसाब लगा कर बताया है कि यदि पृथ्वी के एक मेरु पर एक ग्राम प्रोटन रखा जाय और दूसरे मेरु पर और एक ग्राम तो इस चार हजार मील की दूरी को अतिनम करके उन्हे धक्का मारने का जोर प्रायः ६ सौ मन के दबाव के बराबर होगा। अगर यही विधान हो तो यह

समझना मुश्किल है कि परमाणु केंद्र की अनि स्कीर्ण सीमा में एक से अधिक प्रोटन किस प्रकार मिलजुल कर रह सकते हैं। इस नियम के अनुसार हाइड्रोजन (जिस के केंद्र में केवल एक प्रोटन का एकछत्र राज्य है) को छोड़ कर विश्व का और कोई पदार्थ तो टिक ही नहीं सकता, और फिर विश्व जगत् तो हाइड्रोजनमय ही हो उठता।

इस हम देखने हैं कि यूरेनियम धातु में ९० प्रोटन और १४६ न्यूट्रॉन हैं। यह ठीक है कि इतनी बड़ी भीड़ यह संभाल नहीं सकता, प्रतिभ्रम अपने केंद्र भाण्डार से प्रोटन और न्यूट्रॉन का बोझा हटाना करता रहता है। भार जब कुछ कम हो जाता है तो वह रेडियम का रूप ग्रहण करता है, और भी कम होने पर पोलोनियम और सब से अंत में सीसा का रूप धारण करके स्थिति पाता है।

पूजन में इतना फाट ग्रांट करके भी यह किस प्रकार स्थित रहता है, यह सन्देह तो दूर नहीं हुआ। विकिरण का फलस्वरूप करके भी सब कुछ कट छूट जाने के बाद सीसे के हफ में ८२ प्रोटन उच रहते हैं। पजिट्रॉन रेद्युत का घण्टामार स्रभाय पा कर भी ये प्रोटन किस प्रकार परमाणु लोच की शांति रक्षा करते हैं, इस सवाल का अच्छा जवाब बहुत दिनों तक की जाँच के बाद भी नहीं मिला। केंद्र के बाहर तो इनका भगडा मिटता नहीं, लेकिन केंद्र के भीतर इन की मिश्रता अटूट है, यह एक विषम समस्या है।

रुस राज्य का भेदन के लिये यंत्र शक्ति का यत्न बढ़ाया गया। परमाणु के केन्द्रगत प्रोटॉन रूपा लक्ष्य के विरुद्ध परीक्षा को ने प्रोटॉन का पट्टन रखा था। जिस सत्या में वैद्युत शक्ति उन्हें प्रकाश के रूप में चलाती थी, उस से प्रोटॉनों में प्रति सेकेण्ड १७०० माल का गति निर्गम। तीनों केन्द्रस्थित प्रोटॉन गण अपने प्रोटॉन धर्म की रक्षा करते रहे, आप्रमणकारी प्रोटॉनों का धक्का मार कर फेंक दिया। ताड़ना शक्ति का घेग और बढ़ा दिया गया। विज्ञानियों ने गति का घेग बढ़ा कर ७७०० माल प्रति सेकेण्ड कर दिया, शिकार फिर भी हार मानने को राजा नहीं हुआ। अंत में ८००० माल घेग का धक्का मारने पर विरुद्ध शक्ति में कुछ नम पड़ने के लक्षण दिगे। भविष्यने गाली शक्ति की मेट लॉच कर आप्रमणकारी शक्ति केन्द्र दुग के भीतर पहुँची। देखा गया कि एक प्रोटॉन के बीच प्रोटॉन के जितना निकट पहुँचने पर उनकी परस्पर को धक्का देने वाली प्रवृत्ति जाती रहती है, वह निकटता है जब १ से १,००,००,००,००,००,००० घें हिस्से पर सटकर रहना। तो इस से यह मान लेना पड़ेगा कि उतने सामीप्य पर प्रोटॉनों में परस्पर को ठेल फरने की जो शक्ति है उस में कहा अधिः शक्ति है परस्पर को आकर्षित कर रखने की। महाकर्ष (आकर्षण) शक्ति की अपेक्षा इसका जोर कई गुना अधिः है। यह शक्ति परमाणुओं की दुनिया में प्रोटॉन को जिस प्रकार आट्ट करती है उसी प्रकार न्यूट्रॉन को भी, अर्थात् जिस के ऊपर वैद्युत का चार्ज है और

जिन के ऊपर नहीं है, इन दोनों ही पर दमका गया, न दमका है।  
परमाणु केन्द्रवासी यह अति प्रबल आकर्षण शक्ति उत्पन्न  
विद्युत को रोकें हुए है। जिस शासन ने परमाणुओं के निर्माण  
भण्डों को मिटा रखा है उसी के प्रभाव की शक्ति के द्वारा  
विगजमान है।

आधुनिक इतिहास से इसकी एक नमूना शक्ति का प्रमाण है।  
चीन रिपब्लिक की शान्ति नष्ट कर के कुछ वर्षों में अपने देश को  
जेनगल आपस में लड़ाई करके देश को विभाजित कर दिया।  
राष्ट्र के केन्द्र स्थल में इस विप्लव की शक्ति का प्रमाण है, जो  
धगर होती तो शासन के कार्य में इन शक्तियों का प्रयोग हो, जो  
शक्ति को बलिष्ठ और निरापद रखता रहता। परमाणु शक्ति का प्रयोग  
के राष्ट्रतन्त्र में यह बड़ी शक्ति मय शक्ति है, जो स्वतन्त्र  
जो स्वभावरत नहीं मिलते वे भी मिल जाते हैं, जो स्वतन्त्र  
कर रहे हैं। इस से मालूम होता है कि परमाणु शक्ति का प्रयोग  
पदाथ भलमनसी की शान्ति नहीं है। परमाणु शक्ति का प्रयोग  
उन्हें मिला लिया गया है तब यही शक्ति का प्रयोग हो, जो स्वतन्त्र  
हुआ है। जो स्वतन्त्र भाव से स्वतन्त्र भाव से स्वतन्त्र भाव से  
कर सृष्टि के वाहन बने हुए हैं।

वैद्युत सन्धानी गण जो स्वतन्त्र भाव से स्वतन्त्र भाव से  
समय उनके हिसाब में गोलमा गोलमा शक्ति का प्रयोग  
का अस्तित्व मालूम हुआ। परमाणु शक्ति का प्रयोग  
रश्मि या कस्मिक रश्मि नाम दिया गया। परमाणु शक्ति का प्रयोग



रश्मि कह सकते हैं। कहा मे यह शक्ति जा रही है, कुछ समय में नहीं आया पर उसे देखा गया समय। चेम्मी कोई घन्टु नहीं, एम्मा कोई जीव रहा जिस के ऊपर उसका हस्त रेफ नहीं चला। यहाँ तब कि जानु द्रव्य के परमाणुका का भी यह चोट मार कर उत्तेजित कर देनी है। ये किरणें शायद जीव की प्राणशक्ति का सहायता कर रही हैं, या शायद विनाश कर रही हैं,—क्या करता है मालूम नहीं, जتنا हा निश्चय कहा जा सकता है कि तारात पर रही है।

रश्मि रश्मियों का इस प्रकार जो निरन्तर प्रवेण चल रहा है, उसकी उत्पत्ति का रहस्य अज्ञात ही रह गया। किन्तु जाना गया कि जन्म उद्यम विपुल है, सारे ज्ञासमान को छा कर जन्म सञ्चार हो रहा है, जग में, स्थल में, आकाश में, सर्वत्र ही जन्म प्रवेश है। इस महा आगन्तुक के पाठे विज्ञान का गुप्तचर प्रसार लगा हुआ है, किसी-न किसी विज्ञान उसका गुप्त टिकाना भी मालूम हो कर ही रहेगा।

यदुत से लोग कहते हैं कि रश्मि प्रकाश प्रकाश ही है रेटगन रश्मि से वहीं अत्रि जोगर। इसी विषये ये रश्मियाँ सहज ही मोटा मोटा या मोटा सोना पार कर के निकल जाता है। विज्ञानियों की परीक्षा से जन्म ही जाना गया है कि इस प्रकाश के साथ वैद्युत कणिकाय है। पृथ्वी के जिस क्षेत्र में चुम्बकीय शक्ति अत्रि है, उसी के आकर्षण से ये अपने रश्मि से हट कर मेरु प्रदेश में जमा होती हैं, रश्मी लिये

पृथ्वी के विभिन्न स्थानों में कस्मिरु रश्मि के समावेश की अप्रियता या जल्यता दिखाई देती है।

कस्मिरु रश्मि के सम्बन्ध में आज भी नाना मतों का आवागमन चल ही रहा है। परमाणु के नूतन तत्त्व के स्वरूपान होने के बाद से ही विज्ञान की दुनिया में मतों और मन्तव्यों का हडकम्प मच गया है, विश्व के मूल कार्यान्वयन की व्यवस्था में ध्रुवत्व का पता सकेत रोज निकालना असाध्य हो गया है। यदि कोई वस्तु नित्यन्त्र की व्याप्ति पा सकती है तो वह केवल एक आदि ज्योति है, जो मय-शुद्ध की भूमिका में है, जिस के प्रकाश के नाना अवस्थान्तर्गतों के भीतर में विश्व का यह वैचित्र्य गठित हो उठा है।

## नक्षत्रलोक

यह तो विजयाबा अरुप उद्युत लाल देखा गया। इहा उद्युता के सम्मिलन से ग्रह नक्षत्रों में यह रूपगौर प्रकाशित हो रहा है।

शुरू में हा यह समझा है, यह जानने का कोई उपाय नहीं है कि इस विजयाबाण्ड का नामग क्या है। विजय पदार्थ का उद्युत जोड़ा हा हमें दिखाइ देता है। इस के सिवा हमारी आग, कान और स्पर्श-न्द्रिय की अपनी विशेषता है। इसा जिये जिये के पदार्थ विशेष भाव से, विशेष रूप में, हमें दिखाइ देते हैं। आँखों में तरंग टकराती है, हम प्रकाश देखते हैं, और भी सूक्ष्म या और भी स्थूल तरंगों को देखने की शक्ति हम में नहीं है। जा-शुद्ध देखते हैं वह बहुत थोड़ा है, जो कुछ नहा देखते वह बहुत अधिक है। हमारे आग और कान इसी तरह के हैं कि हम पृथ्वी का व्यवहार नडा सके प्रकृति ने यह खयाल नहा किया कि हम जिगानी बनेंगे। मनुष्य की आग अणुरीक्षण और दूरबीन इन दोनों का काम समान भाव से कर रही है। प्रकृति ने यदि हमें आज की आग से कर गुना अधिक अणुरीक्षण शक्ति सम्पन्न कर दी होती तो हम पृथ्वी के समस्त पदार्थों में अणु परमाणुओं का आवर्त नृत्य

देखते। यदि योज की सीमा खूँ जाता या योध की प्रकृति अन्य प्रकार की होती तो हमारी यह दुनिया भी दूसरी ही तरह की होती।

सच पूछा जाय तो विज्ञानी के लिये वह दूसरी ही तरह की हो गई है—वह इतनी बदल गई है कि जिस भाषा में हम काम चलाया करते हैं, उसका अधिकांश इस दुनिया में किसी काम नहीं आता। प्रतिदिन इस प्रकार के चिह्नों की भाषा तैयार करनी पड़ रही है कि साधारण मनुष्य उसका सिर पैर कुछ भी नहीं समझ सकता।

मनुष्य ने एक दिन स्थिर किया कि विश्वमण्डल के केन्द्र में पृथ्वी का आसन अधिचल है और सूर्य-नक्षत्र उसकी प्रदक्षिणा कर रहा है। यह बात मानने के लिये उसे दोष नहीं दिया जा सकता,—उसने पृथ्वी देखने की सहज जाय से ही देखा था। आज उसकी शक्ति बढ़ गई है—उसे उसने विश्व-देखने की आय बना ली है। अब यह भेद खुल गया है कि पृथ्वी को ही, दग्धेशी नाच की तरह चक्कर मारते मारते सूर्य के चारों ओर भागना पड़ रहा है। रास्ता लंबा है, प्रायः ३६५ दिन घूमने में ही लग जाते हैं। इस से भी बड़े रास्ते वाले ग्रह हैं, उनके एक बार घूम जाने में इतना अधिक समय लगता है कि उतने दिनों तक खड़े रहने के लिये मनुष्य को लोमश मुनि की आयु दरकार होगी।

रात में आकाश के बीच बीच नक्षत्र पुंज के साथ पुंज

हुआ प्रकाश दिया है। स्वयं नाम नीहागिया दिया गया है। दूरबीन और कैमरे के योग से जाना गया है कि स्व नीहागिया में नक्षत्रों की जो भीड़ लगी हुई है उनकी संख्या एक करोड़ है। नीहागिया मण्डल में नक्षत्रों की जो भीड़ अन्यतम प्रण्ड क्षेत्र में दौड़ रही है वह परस्पर धक्का खा कर घूर्णमिचूर्ण क्यों नहीं हो जाती? उत्तर देने समय चीनय हुआ कि इस नक्षत्र पुंज को भीड़ कहना गल्ती है। इन में गले से गला मिला कर या सटकर रहने का भाव एकदम नहीं है। एक दूसरे से अत्यन्त अधिक दूरी पर ये चलते फिरते हैं। परमाणु के अन्तर्गत इलेक्ट्रॉनों के गति पथ की दूरी स्वयं में सर जेम्स जीन्स ने जो उपमा दी है इस नक्षत्र मण्डली के क्षेत्र में भी उसी प्रकार की उपमा दी है। ये कहते हैं कि लण्डन में वाटर्न नामक एक स्टेशन है। जहाँ तक मुझे जान पड़ता है, यह स्टेशन हाउडा स्टेशन से बड़ा ही है। सर जेम्स जीन्स कहते हैं कि उस स्टेशन से और सर कुछ चाली फरसे केवल छ धूलि कण बिखरा दिये जाय तब आकाश के नक्षत्रों का एक दूसरे से जो दूरत्व है वह सब धूलि कणों के प्रच्छेद के साथ तुलनीय हो सकती है। वे और भी कहते हैं कि नक्षत्रों की संख्या जितनी भी क्यों न हो, आकाश की अचिन्तनीय श्रयता के साथ उसकी तुलना हो ही नहीं सकती।

अभिनय आरम्भ होने के बहुत पहले केवल एक परिचयाप्त ज्वलन्त वाष्प ही दृश्यमान था। सभी उष्ण पदार्थों का यह धर्म है कि वे धीरे धीरे ताप त्याग करते रहते हैं। खोलना हुआ पानी पहले भाप बन कर निकल आता है। ठंडा होते होते उस वाष्प के भीतर एक एक कण पानी इकट्ठा होता है। अत्यन्त गर्मी पहुँचाने से कठिन पदार्थ भा गैस हो जाता है, उसी परिमाण में जल गर्मी की उस समय बिम्ब के हल्के या भारी सभी पदार्थ गैस के रूप में थे। करोड़ करोड़ वर्ष से यह ठंडा हो रहा है। गर्मी कम होते होते ऐसी अवस्था आई जब उस गैस में छोटे छोटे टुकड़े घन हो कर टूट पड़े। यही त्रिपुल सप्त्यरु कण तारों के आकार में ढल राख कर नीहारिका गठित किये हुए हैं। यूरोपीय भाषा में इसे नेबुला (जुहवचन नेब्यूल) कहते हैं हमारा सूर्य एक ऐसी ही नीहारिका के अन्तर्गत है।

अमेरिका के एक पर्वत के शिखर पर एक विशाल दुर्गम स्थापित किया गया है, उस की सहायता से एक बहुत बड़ी नीहारिका दिखाई पड़ी है। आण्ड्रोमीडा नामक नक्षत्रमण्डली के भीतर यह नीहारिका वर्तमान है। इसका आकार बहुत कुछ गाड़ी की पहिए के समान है। यह पहिया घूम रही है। एक एक चक्कर लगाने में उसे प्रायः दो करोड़ वर्ष लग जाते हैं। इस के पास से पृथ्वी तक प्रकाश आने में साढ़े आठ लाख वर्ष लग जाते हैं।

नक्षत्रों की दूरी के मरध में मय से पहले महाविज्ञानी न्यूटन ने एक जदाजा लगाया था। उनकी परमेयुक्ति यह था कि नक्षत्र गण ग्रहों की भांति सूर्य के चारों ओर नहा घूम रहे हैं। वे इतने दूर हैं कि सूर्य का आकर्षण उन तक नहीं पहुँच पाता। दूसरी बात यह कि म्यनाम धन्य पुरुषों की भाँति वे अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हैं। नीसग सिद्धान्त यह था कि काल पुरुष के नक्षत्र जितने उज्ज्वल दिग्न रहे हैं, उतना उज्ज्वल दिग्न के लिये सय को, अपनी दूरी से लागों गुना अधिक दूरी पर जाना पड़ेगा। न्यूटन का हिसाब त्रिभुल शीक रहा हो, मो बात नहीं है, किनु उस समय के लिये यह मूर उडे डग की दूरी का निर्देश दिया गया था।

हमार सर में निबन्ध का जो नक्षत्र है, जिसे हम अपने नारा-मुहल्ले का पटोसी कह सकते हैं, उसकी दूरी को सत्या में मजा पर समझाने की कोशिश करना बेकार है। सत्या में रधी हुई जिस दूरी को मोटे तौर पर समझाना हमारे लिये सहज है, वह हमारी पृथ्वी के इस गोलर में ही सीमित है, जिसे हम रंग से, मोटर से या म्मीमर से चलने चलते माप जाते हैं। पृथ्वी को छोड कर नक्षत्र उस्ती की सीमा धारते ही अकों की भाषा पागल्पन जान पडती है। गणित शास्त्र नाक्षत्रिय हिसाब से सत्या के जो जण्डे देता है वह मानो पृथ्वी के बहुश्रु ( बहुत बचा देने वाले ) र्नीहों की ही नकल करना है।

साधारणतः हम कोस या मील के हिसाब से ही दृग् की गिनती करते हैं, नक्षत्रों के सङ्ग्रह में इसी रीति से काम ले तो अकों का बोझा बोना मुश्किल हो जायगा। अब्बल तो सूर्य ही हमारे यहाँ से बहुत दूर है। नक्षत्रों का दल उस से भी लाखों गुना अधिक दूर है। इनकी दूरी का हिसाब अकों से करना वैसा ही है जैसे कोई कौड़ी से हजार हजार मोहरों की गिनती करे। सङ्ख्या का संकेत बना कर मनुष्य ने लिखने का बोझा हल्का किया है। हजार लिखने के लिये उसे हजार लकीरे नहीं खींचनी पड़तीं। किन्तु इस संकेत से ज्योतिष्यक लोग के माप का काम नहीं चलता। इसी लिये एक संकेत खोज निकाला गया है। इसे प्रकाश का माप कह सकते हैं। एक वर्ष में प्रकाश ५८८००० करोड़ मील चलता है। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के घूम आने में जो सौर वर्ष होता है वह जिस प्रकार ३६५ दिनों के माप से मापा जाता है, उसी प्रकार नक्षत्रों की गति विधि, उनकी सीमा और सरहद्दी का माप, प्रकाश की सालाना गति की मात्रा से गिना जाता है। हमारे इस नक्षत्र जगत् का व्यास अन्दाजन् एक लाख प्रकाश वर्ष के बराबर है। और लाखों नक्षत्र जगत् इस के बाहर हैं। वा दूसरे गाँव के नक्षत्रों में से एक का परिचय फोटोग्राफी से मालूम हुआ है, वह प्रायः पचास लाख प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। हमारे सत्र से नजदीकी पड़ोसी नक्षत्र की दूरी चार प्रकाश-वर्ष की है। उसके जिस क्षण का प्रकाश अभी अभी



नक्षत्रों की दूरी के मध्य में मध्य से पहले महत्त्वपूर्ण  
 'यूटन' ने एक अंदाजा लगाया था। उसकी पहली युक्ति यह  
 था कि नक्षत्र गण ग्रहों की भांति सूर्य के चारों ओर नहीं घूम  
 रहे हैं। वे इतने दूर हैं कि सूर्य का आकर्षण उन तक नहीं  
 पहुँच पाता। दूसरा बात यह कि म्यनाम धन्य पुरुरा की नाई  
 वे अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हैं। तीसरा सिद्धान्त यह था  
 कि फाल् पुरुर के नक्षत्र जितने उज्ज्वल दिख रहे हैं, उतना  
 उज्ज्वल दिखने के लिये मध्य को, अपनी दूरी से लगभग गुना  
 अधिक दूरी पर जाना पड़ेगा। 'यूटन' का हिसाब त्रिखुल  
 ठाक रहा हो, सो बात नहीं है, किंतु उस समय के लिये यह  
 ग्युर रहे हम की दूरी का निर्देश दिया गया था।

हमारे सर से निम्न का जो नक्षत्र है, जिसे हम अपने  
 तारा-मुहल्ले का पड़ोसी कह सकते हैं, उसकी दूरी की सग्या  
 से सजा कर समझाने की कोशिश करना बेसार है। सग्या  
 से बंधी हुई जिस दूरी का मोटे तौर पर समझाना हमारे  
 लिये सहज है, वह हमारी पृथ्वी के इस गोलार्ध में ही सीमित  
 है, जिसे हम रेल से, मोटर से या स्टीमर से चलते चलते भाप  
 जाते हैं। पृथ्वी को छोड़ कर नक्षत्र उल्टी की सीमा धौंगते  
 हा नक्षत्रों की भाषा पागलपन जान पड़ती है। गणित शास्त्र  
 नाक्षत्रिक हिसाब से सग्या के जो अण्डे देता है वह मानो  
 पृथ्वी के रहस्य (यहूत बचा देने वाले) कीड़ों की ही नकल  
 करता है।

साधारणतः हम कोस या मील के हिसाब से ही दूरी की गिनती करते हैं, नक्षत्रों के सन्दर्भ में इसी रीति से काम ले तो अकों का रोक्का ढोना मुश्किल हो जायगा। अबल तो सूर्य ही हमारे यहां से उहुत दूर है। नक्षत्रों का दल उस से भी लाखों गुना अधिक दूर है। इनकी दूरी का हिसाब अकों से करना वैसा ही है जैसे कोई कौड़ी से हजार हजार मोहरों की गिनती करे। सूर्या का सवेन बना कर मनुष्य ने लिखने का रोक्का हल्का किया है। हजार लिखने के लिये उसे हजार लकीरे नहीं खींचनी पडती। किन्तु इस सकेत से ज्योतिष्क लोक के माप का काम नहीं चलता। इसी लिये एक सकेत पोज निकाला गया है। इसे प्रकाश का माप कह सकते हैं। एक वर्ष में प्रकाश ५८८००० करोड मील चलता है। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के घूम आने में जो सौर वर्ष होता है वह जिस प्रकार ३६५ दिनों के माप से मापा जाता है, उसी प्रकार नक्षत्रों की गति विधि, उनकी सीमा और सरहद्दी का माप, प्रकाश की सालाना गति की मात्रा से गिना जाता है। हमारे इस नक्षत्र जगत् का व्यास अन्दाजन् एक लाख प्रकाश वर्ष के परावर है। और लाखों नक्षत्र जगत् इस के बाहर हैं। उन दूसरे गाँव के नक्षत्रों में से एक का परिचय फोटोग्राफी से मालूम हुआ है, वह प्रायः पचास लाख प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। हमारे सब से नजदीकी पड़ोसी नक्षत्र की दूरी चार प्रकाश-वर्ष की है। उसके जिस क्षण का प्रकाश अभी अभी

नक्षत्रों की दूरी के मन्त्र में मन्त्र से पहले महाविद्या  
न्यूटन ने एक जड़ाजा लगाया था। उसकी पहली युक्ति यह  
था कि नक्षत्र गण ग्रहों की भांति सूर्य के चारों ओर नहीं घूम  
रहे हैं। वे स्वतन्त्र हैं कि सूर्य का आकर्षण उन तक नहीं  
पहुँच पाता। दूसरी बात यह कि स्वनाम धन्य पुरुषों की नाई  
वे अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हैं। तीसरा सिद्धान्त यह था  
कि बाल पुरुष के नक्षत्र जितने उज्ज्वल दिग्न रहे हैं, उतना  
उज्ज्वल दिग्गने के लिये सूर्य को, अपनी दूरी से लाखों गुना  
अधिक दूरी पर जाना पड़ेगा। न्यूटन का हिसाब त्रिकुल  
टीक रहा हो, सो बात नहीं है, किन्तु उस समय के लिये यह  
नूर रहे डग की दूरी का निर्देश दिया गया था।

हमारे सन् से निकट का जो नक्षत्र है, जिसे हम अपनी  
नारा-मुहल्ले का पटोसी कह सकते हैं, उसकी दूरी को सत्या  
मे सजा कर समझाने की कोशिश करना बेकार है। सत्या  
मे पृथ्वी दुर्ग जिम दूरी को मोटे तौर पर समझाना हमारे  
लिये सहज है, वह हमारी पृथ्वी के उस गोला में हा सीमित  
है, जिसे हम रेल से, मोटर से या स्टीमर से चलते चलते माप  
जाने हैं। पृथ्वी को छोड़ कर नक्षत्र उस्ती की सीमा धाँगते  
ही अर्कों की भाषा पागलपन जान पड़ती है। गणित शास्त्र  
नाक्षत्रिय हिसाब से सत्या के जो अण्डे देता है वह मानो  
पृथ्वी के चतुर्मुख (चतुर्न वधा देने वाले) कीडों की ही नक़्क  
करता है।

साधारणतः हम कोस या मील के हिसाब से ही दूरी की गिती करने हैं, नक्षत्रों के सन्तान में इसी रीति से काम ले तो अको का रोक्का ढोना मुश्किल हो जायगा। अब्बल तो सूर्य ही हमारे यहाँ से खुद दूर है। नक्षत्रों का दूरी उस से भी लाखों गुना अधिक दूर है। इनकी दूरी का हिसाब अकों से करना वैसा ही है जैसे कोई कौड़ी में हजार हजार मोहरों की गिनती करे। सरया का सन्तान घना कर मनुष्य ने लिग्ने का रोक्का हल्का किया है। हजार लिग्ने के लिये उसे हजार लकीरें नहीं चींचनी पडती। किन्तु इस सन्तान से ज्योतिषिक लोको के माप का काम तही चलता। इसी लिये एक सन्तान खोज निकाला गया है। इसे प्रकाश का माप कह सकते हैं। एक वर्ष में प्रकाश ५८८००० करोड मील चलता है। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के घूम आने में जो सौर वर्ष होता है वह जिस प्रकार ३६५ दिनों के माप से मापा जाता है, उसी प्रकार नक्षत्रों की गति विधि, उनकी सीमा और सरहद्दी का माप, प्रकाश की सालाना गति की मात्रा से गिना जाता है। हमारे इस नक्षत्र जगत् का व्यास अन्दाजन् एक लाख प्रकाश वर्ष के बराबर है। और लाखों नक्षत्र जगत् इस के ग्राहक हैं। उदाहरण गाय के नक्षत्रों में से एक का परिचय फोटोग्राफी से मालूम हुआ है, वह प्रायः पचास लाख प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। हमारे सन्तान से नजदीकी पडोसी नक्षत्र की दूरी चार प्रकाश-वर्ष की है। उसके जिस क्षण का प्रकाश अभी

हमारी आखों को मिला है, अब तब उन्हें रीति चार वर्ष हो गये, वह नक्षत्र भी तब से २० करोड़ मील दूर जागे निकल गया है। ऐसा कोई उपाय नहीं कि किसी बदल समय के इस व्यग्रमान को पार करके नक्षत्र की वर्तमान खबर पाइ जा सके।

जहाँ से देखने के युग के बाद दूरगमन का युग आया। ज्यों ज्यों दूरगमन की शक्ति बढ़ती गई त्यों त्यों दूरगमन में हमारी दृष्टि की परिधि भी बढ़ती गई। पहले जहाँ पार्ले स्थान दिखता था वहाँ अब नक्षत्रों के झुंड दिखाई गिये। तोभी बहुत कुछ बाकी रह गया। जहाँ तो रहना ही चाहिये। हमारे नक्षत्र जगत के बाहर ऐसे जगत भी हैं जिन की रोशनी दूर गमन दृष्टि के भी परे है। एक मामूली उत्ती की शिखा ८७ मील की दूरी पर जितना रोशनी देती है, ऐसी आभा को भी दूरगमन के याग से पकड़ने की चेष्टा में मनुष्य की आख हार मान गई। दूरगमन अपनी शक्ति के मुताबिक आगों को खर पकड़ा देता है, लेकिन आगों के पास अगर इतनी शक्ति न हो कि उस अत्यन्त क्षीण समाचार को रोध के कोड़े तब पकड़ा सके तो उपाय क्या है। किन्तु फोटोग्राफ के फल (प्लेट) की प्रकाश ग्रहणी शक्ति आगों से कहा अधिक है। इस शक्ति का उद्बोधन विज्ञान ने किया है, फोटोग्राफ को उसने दूरतम आकाश में जाल फैलाने के लिये नियुक्त किया। ऐसी फोटोग्राफ १ मील जो अंधकार में चुपचाप दुबके हुए प्रकाश पर भी समन जारी कर सके। दूरगमन के साथ फोटोग्राफी और

फोटोग्राफ के साथ चणेलिपि यंत्र को जोड़ लिया। वाजकल  
 गसकी शक्ति और मो विचित्र कर दी गई है। सूर्य में अनेक  
 नक्षत्र पदार्थ गैस हो कर जल गये हैं। वे सूर्य जल एक साथ  
 मिल कर दिखाई देते हैं तो उन्हें टोका गया कर देगना समझ  
 नहा होना। इसी लिये एक अमेरिकन विज्ञानी ने सूर्य देगने  
 वाला दृग्गती बनाया है। इस से सूर्य में जलने हुए गैसों के  
 सूर्य प्रकार के रंगों से एक एक प्रकार का रंग अलग निकाल कर  
 उसकी सहायता से यह विशेष गैसीय रूप देगना समझ हुआ  
 है। इच्छानुसार केवल मात्र ज्वलन्त कैलसियम के बैंगनी रंग  
 या ज्वलत हाइड्रोजन के लाल रंग में सूर्य को देख सकने से  
 उसके गैसीय अग्रिकाण्ड की अनेक परतें मिल जाती हैं जो  
 और किसी तरह नहा पाइ जा सकतों।

उजले प्रकाश को विभक्त करने से उसके वर्णसप्तक की एक  
 ओर दिखाई पड़ता है बैंगनी रंग, और दूसरी ओर लाल—इन  
 दो सीमाओं के बाहर जो प्रकाश है, वह हमारी आँखों को  
 नहीं दिखता।

घने नील रंग की तरंगों का परिमाण एक इंच के डेढ़  
 करोड हिस्से का एक हिस्सा है। अर्थात् इस प्रकाश के रंग में  
 जो तरंग लहराती है, उसकी एक तरंग की चूड़ा से परवर्ती  
 तरंग की चूड़ा तक का माप इतना है। लाल रंग के प्रकाश  
 का तरंग ठीक इस से दूनी होती है। एक तपाये हुए लोहे  
 का ज्वलन्त लाल रंग जब धीरे धीरे बुझता जाता है, और

दिगाई नहीं देता उस समय और भी बड़े माप की अदृश्य प्रकाश की तरंग उससे निकलती रहती हैं। यह तरंग यदि हमारी दृष्टि को जगा सकती तो उस लाल उजाली रंग के प्रकाश में हम शुभ्र गते हुए लोहे को देख सकेंगे, फिर ग्रीष्म काल की साँझ को 'गुप' जल अंधेरे में मित्र भी जाती लौ भी इस लाल-उजाली प्रकाश से पृथ्वी आभासित हो कर हमें दिगाई देती।

त्रिखुल अधकार जैसी थोड़ी सीज दुनिया में नहीं है। हम जिन्हें देख नहा सकते उनके भी प्रकाश हैं। नक्षत्रलोक के बाहर निविड काले आकाश में भी निरंतर नाना प्रकार की विरणें छिटर रही हैं। घण्टिपि शुभ्र दूरबीन कोटोम्राफ की सहायता से इन अदृश्य इतों को भी दृश्य पट पर स्थाव कर अनेक गुन घाता का पता लगा लिया जाता है।

चैंगनी पार का प्रकाश लाल उजाली के प्रकाश की तरह ज्योतिषियों के इतने काम का नहीं होता। इसका कारण यह है कि इस छोटी तरंग का बहुत कुछ पृथ्वी की हवा पार करने में ही नष्ट हो जाता है। और यह दूर के लोक की खबर देने लायक नहीं रह जाता। यह तरंग परमाणुलोक की तरंग देती है। एक विशेष मात्रा की उत्तेजना से परमाणु स्वैत प्रकाश से स्पन्दित होते हैं। तेज और भी बढ़ने पर चैंगनी पारका प्रकाश दिगाई देता है। और भी बढ़ने पर जो रश्मि निकलती है वही एक्स रश्मि (एक्स रे) है। अन्त में परमाणु का केन्द्र-वस्तु जो विचलित होता रहता है तो वह और भी छोटी रश्मि

ले कर गामा रश्मि में जा पहुँचना है। मनुष्य ने यत्र शक्ति को इतना बढ़ा लिया है कि वह एक्स रश्मि और गामा रश्मि जैसी रश्मियों को भी देख और अनुभव कर सकता है।

जो बात कहने जा रहा था वह यह है कि वर्णलिपि युक्त दूररीन फोटोग्राफ की सहायता से मनुष्य नक्षत्र विश्व के अति दूरर्ती अदृश्य लोक को भी दृष्टि मार्ग में ले आया है। हमारे अपने नक्षत्र लोक से दूर बाहर के अनेक नक्षत्र लोकों का पता लगा है। केवल यही नहीं, इस यत्र की दृष्टि में यह बात भी पड़ी है कि वे सब मिल कर हमारे नक्षत्र आकाश में और दूर-तर आकाश में चक्कर खाट रहे हैं।

दूर आकाश में कोई ज्योतिर्मय गैस का पिण्ड, जिसे नक्षत्र कहते हैं, जब हमारी ओर बढ़ता जाता है या दूर हटता जाता है तब हमारी दृष्टि में एक विशेषता आ जाती है। वह पिण्ड स्थिर रह कर जितनी लम्बी प्रकाश की तरंग हमारे पास पहुँचा सकता, नजदीक आते रहने पर उस से अधिक और दूर हटते रहने पर उस से कम पहुँचाता है। जिन सब प्रकाशों की तरंग मनुष्य में ज्यादा जोर लगाई में कम होती हैं उनका रंग वर्ण-सप्तक में बैंगनी की ओर दिखाई देता है। इसी लिये नक्षत्रों के नजदीक आने और दूर जाने का सकेत भिन्न भिन्न रंगों के सिगनल से वर्णलिपि बता दिया करती है। दूर हटने की संकेत देता है लाल रंग और नजदीक आने की संकेत बैंगनी रंग।

सीटी सुनाती हुई रेलगाड़ी जब पास से गुजरती है तो



उसकी आराम कानों को अधिक मालूम होती है। क्यों कि सीटी हवा में तंग उठा कर जो शब्द हमारे कानों तक पहुँचाती रहती है वही गाड़ी के नजदीक आने पर तरंगों के पुजीभूत होने के कारण जोर की अनुभूति उत्पन्न करती है। प्रकाश में अधिक रंग का सत्तक रंगनी का है।

नीहारिका में जो उज्ज्वलता है वह उसके अपने प्रकाश के कारण नहीं है। जो नक्षत्र उस में भीड़ मिले हुए हैं वे ही उसे आलोकित कर रहे हैं। ठीक उस तरह से नहीं जिस तरह चाँद को सूर्य आलोकित करता है। अर्थात् नक्षत्र का प्रकाश नीहारिका में टकरा कर रहा आ रहा है। नीहारिका के परमाणु नक्षत्र के आलोक को सोख लेते हैं और फिर मिश्र प्रकार की लहरों के प्रकाश के रूप में उनकी गपतनी कर देते हैं।

नीहारिका में और एक प्रकार की विशेषता दिखाई देती है। उस के भीतर बीच-बीच में मेघ की तरह काला काला पुता हुआ सा दिगता है, निमिडितम तारिकाओं की भीड़ में स्थान स्थान पर फाँटे काले घाली स्थान हैं। त्र्योतिपी वर्नर्ड के पर्यवेक्षण से आकाश में नम प्रकार के प्राय दो सौ काले धब्बे दिखाई पड़े हैं। वर्नर्ड का अनुमान है कि ये धब्बे अस्वच्छ गैस के मेघ हैं जो अपने पीछे के नक्षत्रों को ढके हुए हैं। इन में कुछ नजदीक हैं, कुछ दूर, कोई कोई छोटे हैं और कोई कोई बहुत विशाल।

नक्षत्र लोक के पश्चाद्वर्ती आकाश में जो वस्तुपुत्र क्षितिपथे

हृण हैं उनकी निपिडता का हिसाब करने से जाना जाता है कि यह बहुत ही कम है, प्रत्येक घन इंच में सिर्फ आधे दर्जन परमाणु। यह कितना कम है यह बात इसी से समझी जा सकती है कि पित्रान के परीक्षागार में सब से अधिक शक्तिशाली पम्प के द्वारा जो शून्यता निर्माण की जाती है उसके भीतर भी एक घन इंच में कई करोड़ परमाणु रह ही जाते हैं।

हमारा अपना नक्षत्र लोक एक चिपटा चक्र खाया हुआ जगत् है जिस में लाखों नक्षत्र भरे पड़े हैं। उनके बीच-बीच में जो आसमान है उस में अति सूक्ष्म गैस कहीं तो अत्यन्त पिरल और कहीं अपेक्षाकृत घन है, कहीं उज्ज्वल और कहीं अम्बच्छ है। हमारा सूर्य इस नक्षत्र लोक के केन्द्र से दूर एक प्रान्त में स्थित एक नक्षत्र मेघ के भीतर है। नक्षत्रों की अधिक भीड़ नीहारिका के केन्द्र के पास होती है।

सेंटॉरेस नक्षत्र का व्यास उन्तालीस करोड़ मील है और सूर्य का जाठ लाख बीसठ हजार मील। सूर्य मझोले जाकार का ही तारा माना जाता है। जिस नक्षत्र जगत् का एक मध्यचिन्न तारा यह सूर्य है उसके समान और भी लाख-लाख जगत् विद्यमान हैं। सब मिला कर जो यह ब्रह्माण्ड है उसकी सीमा कहाँ है, यह हम नहा जानते।

हमारा सूर्य अपने सब ग्रहों को लेकर चक्र मार रहा है और उसके साथ ही साथ इस नक्षत्र चक्रणों के सब तारे चक्र मार रहे हैं,—एक ही केन्द्र के चारों ओर। चक्र प्रवाह,

आकर्षण से सूर्य का गति वेग एक सेकेंड में दो सौ मील है। पुमती हुई पहिया से छिटके हुए पर की तरह यह (सूर्य) भी नक्षत्रचक्र में से छिटक पड़ता, किन्तु इस चक्र के हजार करोड़ नक्षत्र उसे ग्राह कर पकड़े हुए हैं और मयादा के बाहर नहीं जाने देते।

इस आकर्षण शक्ति की सार निधय ही पाठकों की जाना हुई है, नौमी उसे इस प्रियकरणना में से निकाल देने में काम नही चरने का।

मन्य हो या भूठ, पर जहानी मगहर है जि विज्ञानी श्रेष्ठ न्यूटन ने एक दिन देगा जि एक सेंरका फल दरक्त से गिरा। उसी समय उनके मन मे लगा कि फल नीचे ही क्यों आया, ऊपर क्या नहीं उड गया। सोच कर उन्होंने ने देगा कि पृथ्वी सत्र कुठ को अपना ओर राख रही है, उस में राखने की एक शक्ति है। इस शक्ति का नाम रखा गया Power of Gravitation जिसे हिन्दी में 'गुरुत्व' कह सरते हैं। जिस में वस्तु परिमाण जितना ही अधिक है उस पर पृथ्वी का आकर्षण उतना ही ज्यादा लग रहा है। केवल पृथ्वी ही क्यों, ऐसा कोई पदार्थ ही नहीं है जो ग्राहता नहीं। यह जरूर है कि राखने की शक्ति किसी में अधिक है किसी में कम। इस के सिवा दूरच की कमी ज्यादानी से इस ग्राहता की भी कमी ज्यादानी होती है। जिस का वस्तु परिमाण दुगुना है, वह दुगुनी ताकत से राखता है पर अगर दूनी भी दुगुनी हो जाय तो ग्राहता

चौगुना कम हो जाता है। दूरो और चौगुनी हों तो पिचाय १६ गुना कम हो जाता है। ऐसा अगर न होता तो सूर्य के आकर्षण से सब कर पृथ्वी पर कुछ बच रहना कठिन होता। इस पीचतान की पहलुयानी में नजदीक की चीजों पर पृथ्वी की ही जौन रह गई है।

दो विपरीत परमाणुओं के मिलन से जिस जगत् को रचना हुई है उस में दो सर्वव्यापी रिद्ध शक्तियों की बिया चल रही है, चलना और पीचना, मुक्ति और बन्धन। एक तरफ मो ब्रह्माण्ड व्यापी महा दौड और दूसरी तरफ ब्रह्माण्ड व्यापी महा पिचाय। सभी चल रहे हैं और सभी ब्वाच रहे हैं। चलना क्या है और कहा से आता है, यह भी मालूम नहीं और पीचना क्या है और कहा से आता है, यह भी मालूम नहीं। आजके विज्ञान में वस्तु का वस्तुत्व अत्यन्त क्षीण हो आया है, यह चलना और पीचना ही सब से अधिक प्रबल हो कर दिखाई पड़ता है। अगर अनेक चलना हा होता तो वह सीधे रास्ते में ही चलना रहता जिसका कोई ओर होता न छोर। आकर्षण उसे घुमा कर फिरा कर सान्त सीमा में ले जाता है, और चक्र पथ में घुमाया करता है। सूर्य पत्र ग्रहों के बीच गयो मील का व्यवधान है, उस दूरत्व की शून्यता पार करके निरन्तर अशरीरी आकर्षण की शक्ति चल रही है। इतर सूर्य भी बहु कोटि भ्राम्यमान नक्षत्रों से रो हुए एक महा ज्योतिष्क के आकर्षण से चकर मार रहा है। बिम्ब की अणीयसी गति शक्ति की ओर

वेगा, वहां भा गिराट चलन—और गिराट भाषण की एक ही छल्लोरीया चल रही है। सूर्य तथा अन्य ग्रहों के यात्र में जो दूरी है, तुम्हा फरके देना गया है कि गति परमाणु जगत् के प्रोटन और इलेक्ट्रॉनों की दूरी प्रायः उसी अनुपात में है। आकर्षण का जोर उन शून्य को पार करके इलेक्ट्रॉनों के दूर की नित्य काल के अन्त्यस्त भाग पर घुमा रहा है। यहा एक बार फिर से कह सक्ता जरूरी है कि इलेक्ट्रॉन और प्रोटन में जो परस्पर का आकर्षण है वह महाकर्ष संवर्धी नहा है, वह घेद्युत का आकर्षण है। परमाणुओं के अन्तरका आकर्षण घेद्युत का आकर्षण है, और बाहर का आकर्षण महाकर्ष का, जैसे मनुष्य के घर का गिच्चा आत्मीयता का गिच्चा है और बाहर का समाज संवर्धी।

हमारा यह ग्राक्षत्र जगत् मानों गिराट शून्य के भीतर अत्र स्थित एक द्वीप है। यहा से दूर दूर और अनेक नाक्षत्र द्वीप दिखाई देते हैं। इन द्वीपों में जो हमारे सघ से निकट है वह जाण्ड्रोमीडा तन्त्रगुज के पास दिखाई देता है। देखने में यह एक धुधले तारे जैसा लगता है, वहां से जो प्रकाश देखाइ देता है वह तो लगभग पहले यात्रा की निरन्तर चुका था। कुण्डली भूत नाहारिकायें और भी हैं, और भी अधिक दूरी पर। उनमें जो सघ से दूरतमों है उसके विषय में हिसाब लगा कर देखा गया है कि वह ३०००००००००० प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। इन सघ नाक्षत्र जगत् का सग्या जित में मोटि मोटि तक्षत्र जमा हुए हैं, सौ करोड से कम न होगी।

आज कल एक आश्चर्य की घान चर रही है। यह यह कि नजदीक के दो तीन को छोड़ कर प्राचीन नक्षत्र जगत हमारे पास से प्रमग्न दूर हटते ही जा रहे हैं। वे जितनी ही अधिक दूरी पर हैं, उनके दौड़ने का वेग भी उतना ही अधिक है। इन सब नक्षत्र जगत्‌ओं से बने हुए जिस विश्व को हम जानते हैं वह, किसी किसी पड़ित के मन से, निरन्तर फूलता जा रहा है। इस लिये यह जितना ही फूलता है उतना ही नक्षत्र पुंज के परस्पर का दृग्व्य बढ़ता जा रहा है। जिस तेजी से वे हट रहे हैं उसने हिसाब से और भी १३० करोड़ वर्ष बीतने पर उनकी पारम्परिक दूरी आज की अपेक्षा दुगुनी बढ़ जायगी।

अर्थात् इस पृथ्वी के भ्रमण में जो समय लगा है उतनी देर में नक्षत्र विश्व भागे की अपेक्षा दुगुना फूट गया है।

केवल यही नहीं, एक दल विज्ञानियों के मत से इस वस्तु-पुंज सघटित विश्व के साथ ही साथ गोलक रूपी आकाश भी विस्फारित होता जा रहा है। इनके मत से शून्य आकाश के किसी एक बिंदु से अगर एक सीधी लकीर खींची जाय तो वह असीम में न चली जा कर फिर उसी बिंदु पर आ मिलती है। इसका मतलब यह हुआ कि आकाश गोलक में नक्षत्रों के जगत् उसी प्रकार घेरे हुए हैं जिस प्रकार पृथ्वी गोलक को जीव जन्तु और वृक्ष लतायें। इसी लिये इस विश्व जगत् का फूल उठना उस आकाश मण्डल के विस्फारण के माप पर ही है। किन्तु यह याद रखना चाहिये कि इस मत का

स्थापन अभा पूर्ण रूप से नहीं हुआ है। आकाश असीम है, काल भी निरपेक्ष है, यह मन ही प्रगल्भ होता जा रहा है। आकाश बुदबुद की तरह है या नहीं, इस त्रिष्व पर अनेक मन बुदबुद की तरह ही उठे और गिरने लगे। इस प्रसंग में हमारे शास्त्रों का मन यह है कि सृष्टि प्रलय की ओर जा रही है। उसी प्रलय से फिर नूतन सृष्टि उदभासित हो रही है, उसी प्रकार जैसे नींद और जागरण यारी यारी से आते रहते हैं। अनादि काल से सृष्टि और प्रलय का वयावृत्ति चक्र और शत की तरह यारी यारी से आ रहा है, इस कल्पना को मन में लाना ही सहज है।

पर्सियस राशि में जेज्जल नामक एक उज्ज्वल नक्षत्र है। उस की उज्ज्वलता ६० घंटे तक स्थिर रहती है। उसके पांच घंटे बाद उसका प्रभा पर तिहास कम हो जाती है। इसके बाद फिर उज्ज्वल होने लगता है। पांच घंटे बाद पूर्ण उज्ज्वलता आ जाता है, यह पूर्ण पंच वर्ष साठ घंटे तक रहता है। इस उज्ज्वलता का कारण उसका जोड़ीदार नक्षत्र है। प्रदक्षिण के समय क्षण क्षण पर ग्रहण लगता और छूटता रहता है।

और एक प्रकाशक नक्षत्र है जिन की दीप्ति किसी ग्रहरी कारण से नहीं बलिव भोंतर के ही किसी ज्वार भाटे से घटती बढ़ती रहता है। कुछ जिन तक समस्त तारा विस्फाग्नि और फिर सन्तुलित हो जाना है। उसका प्रकाश मानो तापी की प्रज्वलन है।

और एक प्रकार के नक्षत्रों की बात कहनी है। इन्होंने नाम पाया है, नये तारे। इनका प्रकाश एक अत्यन्त तेजों के साथ उज्ज्वल हो जाता है, हजार गुने से लेकर लाख गुने तक। इस के बाद धीरे धीरे अत्यन्त धुन हो जाता है, एक समय इन एकाएक जल उठने वाले तारों के आग्निभात्र को नया आग्निभाव सम्भ्रम कर इन्हें नाम दिया गया था, नये तारे।

कुछ दिन पहले, गत वर्ष, लासेटा अर्थात् गोधिका नामधारी नक्षत्र राशि के पास एक ऐसा ही नक्षत्र, जिसे नया तारा कहते हैं एकाएक अत्यन्त उज्ज्वल हो उठा। एक एक करके चार छिलके उसने उतार फेंके। देखा गया कि इसके उतरे हुए छिलके एक सेक्रेड में २०० मील के वेग से दौड़ पड़े। यह नक्षत्र प्रायः २६०० प्रकाश-वर्ष की दूरी पर है। अर्थात् इस के गैस ज्वलन का यह उत्पत्तन जो आज हमारी आँखों को दिखाई दिया है, ईसा मसीह के जन्म के ६॥ सौ वर्ष पहले प्रदित हुआ था। उसके इन उतार फेंके हुए छिलकों का क्या हुआ, इस विषय का अनुमान लगाया जा रहा है। वह क्या उसका अग्रज काट कर महाशून्य में प्रिरागी होते जा रहे हैं, या उसी के आकर्षण में रँध कर उसके अनुगत होते जा रहे हैं। यह जो तारों का जल उठना है, इस घटना पर विचार करते हुए किसी किसी पटिन ने कहा है कि सम्भवतः नक्षत्र के इसी प्रकार के विस्फोरण से ग्रहों का उत्पत्ति होता है। खूब समय, सूर्य ने भी एक दिन इसी प्रकार नये तारों की रोति अनुसरण करके अपने



उत्साहित चिह्नित अंशों से ही ग्रहणी सन्तानों का जन्म दिया ग। यह मन अगर ठीक हो तो सम्भवतः अन्यत्र प्राचीन नक्षत्र का एक नि निष्कारण की अवस्था प्राप्त होती है और इस प्रकार ग्रह चक्र की सृष्टि होता है। आधुनिक शास्त्र में इस का नक्षत्र नि सन्तान है।

दूसरा मन यह है कि यात्रा का एक चक्र आता हुआ तारा परस्पर के आकर्षण के दृष्टिकोण में आकर इस प्रत्यक्ष फाट के घटाने में सहायक हुआ है। इस मन के अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति की जागेचना बाद में की जायगी।

हमारे आक्षेप जगत् के नक्षत्र नाम जानि के हैं। कोई कोई सूर्य से २५ हजार गुना अधिक प्रकाश देता है, और कोई कोई सौवें हिस्से का एक हिस्सा। किसी किसी का पदार्थपुञ्ज बहुत घन है और किसी का अत्यन्त पतल। किसी के ऊपरी सतह की ताप मात्रा ३० हजार सेन्टीग्रेड है, किसी किसी का तीन हजार सेन्टीग्रेड से अधिक नहीं, कोई कोई बार बार प्रसङ्गित और बुझित होते होते जागेक और उत्ताप का उचार भाटा उठा रहे हैं, कुछ अकेले चर रहे हैं और कुछ झुट जाँध कर। उनकी सग्या नक्षत्र दल की एक तिहाई है। जाड़े नक्षत्र महाकर्ष के जाल में फँस कर प्रदक्षिण का अभिनय कर रहे हैं। जोड़े में जिस के आकर्षण की ताकत कम है उसी के निर पर प्रदक्षिण का जवाबदेही पड़ती है। चिन्तनी अवस्था पृथ्वी कुछ व्याच ही न रही हो सो बात नहीं है किन्तु सूर्य की

बहुत अधिक विचलित नहीं कर सकती। प्रदक्षिण का साग अनुष्ठान अकेली पृथ्वी को ही बगना पड़ता है। जहाँ रा ज्योतिषों के आकर्षण की शक्ति प्रायः बराबर है वहाँ ग्रहों में लक्ष्य स्थिर रख कर दोनों ही उसी लक्ष्य की प्रदक्षिणा करते हैं।

किसी किसी जोड़े को प्रदक्षिण का एक चक्कर लगाने में कई हजार वर्ष लग जाते हैं। कभी देखा जाता है, चक्कर देते देते एक ने दूसरे को हमारी दृष्टि से पथ से आड़ में कर दिया, इस प्रकार उज्ज्वलता में बाधा देता है। किन्तु आड़ में करने वाला नक्षत्र अपेक्षाकृत अनुज्ज्वल न होता तो उज्ज्वलता में बाधा न पड़ती। नक्षत्रों में एक दूसरे की उज्ज्वलता में काफी भेद है। किसी नक्षत्र ने, ऐसा भी होता है कि, अपनी सत्र दीप्ति खो दी। प्रकाण्ड आयतन और प्रचण्ड उत्ताप ले कर जो नक्षत्र अपनी शाल्य दशा शुरू करने हैं, वे पहले उज्जले होते हैं, रात में कुछ पीलापन लिये हुए और तीन पन बीत जाने पर लाल हो जाते हैं। इसके बाद और भी ठंडा हो जाने पर मरच करने लायक जो कुछ प्रकाश की पूजी रहती है उसे भी फूक बैठते हैं। अन्तिम अवस्था में ये दिगालिये नक्षत्र अख्यात अन्य कार में धास करने हैं।

वेटेलजियुस नामक एक महाकाय नक्षत्र है, उसकी लाल गेशनी देखने से जान पड़ता है कि उसकी उमर काफी बड़ी हो चुकी है, फिर भी वह फिलमिला रहा है। हाल ही में खबर मिली है कि यह तारा बुद्ध नहीं, बालक है। हमारा सूर्य

इसकी अपेक्षा प्रौढ़ है। फिर वह है बहुत दूर, पृथ्वी तक उसका प्रकाश जाने में १६० वर्ष लगने हैं। असल बात यह है कि इसका आयतन अनि ज्ञात है, अपने शरीर में करोड़ों सूर्यों को स्थान दे सकता है। उधर वृश्चिक राशि में पेंटारेस् नामक एक नक्षत्र है, उसका आयतन वेटेल्जियुस से भी प्रायः दुगुना है। फिर ऐसे भी नक्षत्र हैं जो हैं तो गैसमय परन्तु वजन में लोहे से भी भारी हैं।

महाकाय नक्षत्र इस लिये उड़े महा हैं कि उनका घनत्व परिमाण बहुत अधिक है, वे सिर्फ बहुत अधिक फूल उठे हैं। फिर ऐसे अनेक छोटे नक्षत्र हैं जिन की छुटाई के कारण उनके गैस का समग्र द्रुस द्रुस पर गांधे हुए गहर की तरह है। सूर्य का घनत्व इनके बीच का है, अर्थात् पानी से कुछ ज्यादा। कैपेज नक्षत्र का औसत घनत्व हमारी हवा के समान है। लेकिन वहाँ अगर हम हवा उड़ाने की बात सोचे तो याद रखना होगा कि परिवर्तन अव्यक्त अत्रि होगा। उसके ताप की मात्रा ३० लाख सेटीग्रेड के आसपास है। इन सब को मात कर गया है कागपुरथ मंडली का दानव नक्षत्र वेटेल्जियुस और वृश्चिक राशि वाला पेंटारेस। इसका घनत्व इतना अधिक कम है कि पृथ्वी के किसी पदार्थ के साथ उनकी मुद्रा तुलना भी नहीं हो सकती, ज्ञान की प्रयोगशाला में गुरु बीच पर पण विष हुए पात्र में जितनी कुछ गैस बनी रह है उसा के समान।

फिर दूसरे मिनारे पर उजले रंग के टिंगने नार हैं। उनमें घनत्व के निकट लोहा या प्लेटिनम कुछ भी नहीं पहुँच सकते। फिर भी ये जम कर कठिन नहीं हो गये हैं, ये सघन गैस-प्रकार के ही मसोत्र हैं। नारों की सीनगी दुनिया में जगती है जो प्रचण्ड ज्वार है उसमें इलेक्ट्रन गण प्रोटन के घनत्व में विच्छिन्न हो जाते हैं, और तारेदारी की जगहों में छुट्टी पा जाते हैं,—दोनों दोनों का मान धन्य कर चलने तो जहाँ अन्तर बढ़ जाता वह कम हो जाता है, इस प्रकार उज्ज्वल परमाणुओं में निगन्न सिर फुडीयल चरनी रहना है। परमाणु की रसी आयतन की छुट्टाई के अनुसार नक्षत्र का आयतन भी छोटा हो जाता है। इधर इस मोड़ फोड़ के गैर कारगर शान्ति-भग से गर्मी बढ जाती है, जो सहज मात्रा का छाड़ जाती है, और फिर घन गैस प्लेटिनम में भी तीन हजार गुना भारी हो जाता है। इसी लिये टिंगने नारें माप में छोटी होती हैं, पर ताप में नहीं, और घजन की मयाश में भी बर्दा का मान देते हैं। सोरियस नक्षत्र में एक अष्टमर्गी नारा है। उसका माप तो साधारण ग्रहों के समान छोटा है परन्तु उसके घनत्व पुज का परिमाण सूर्य के ही समान है। सूर्यका घनत्व उन्हीं के ह्योडे से कुछ कम है। पर सौरियस के सूर्य के घनत्व जल के पचास हजार गुना है। एक टिंगने के डिबिया में इसका गैस भग दस लाख गुना उज्ज्वल से भी अधिक होगा। और फिर दूसरे नक्षत्र में

का उसी मात्रा का पदार्थ जलन में करीब दस हजार मन से भी अधिक होता ।

हमारे नाक्षत्र जगत् के नक्षत्रों के दल, कोई पूर्ण में कोई दक्षिण में, नाना तरह के भागा से चल रहे हैं । सूर्य सेकेण्ड में ग्राह मील के वेग से दौड़ रहा है, एक दानव ताग है जिसके दौड़ने का वेग प्रति सेकेण्ड सात सौ मील है । किन्तु अचरज का बात यह है कि इन में का कोई भी नाक्षत्र जगत् के शासन की अपा करने ग्राह्र जा कर गायत्र नहीं हो जाता । एक महारथ के महाजात्र में करोड़ों नक्षत्रों को बाँध कर यह जगत् लट्ठू की भाँति चक्कर मार रहा है । हमारे नाक्षत्र जगत् के ग्राह्र के दूरवर्ती जगत् में भी यह आवर्तनचल जारी है । इधर परमाणु जगत् के अणुतम आकाश में प्रोटन और इलेक्ट्रन का चक्कर मारना चल रहा है । इसी लिये हमारी भाषा में इस त्रिभुव को जगत् कहते हैं । अर्थात् यह चल रहा है, यही इसकी सत्ता है—चलने से ही इसकी उत्पत्ति है, चलना ही इसका स्वभाव ।

नाक्षत्र जगत् के देश काल का परिमाण, परिमाण, दूरत्व और उसके अंगि आवर्त की चिन्तनातीत प्रचण्डता को देख कर जितना भी चिन्मय क्यों न मालूम हो, यह बात माननी ही पड़ेगी कि इस त्रिभुव में सब से बड़े आश्चर्य का विषय यह है कि मनुष्य उसे जान रहा है, और अपनी आशु जीविका के प्रयोजन को अतिग्रह करके उन्हें जानने जा रहा है । श्रुत से भी श्रुत क्षणमंगुर उसका देह है, त्रिषद् त्रिभुव-सम्पत्ति के अणुमात्र

स्थान में उसका वास है, फिर भी असीम ने नैऋत्य प्रातः त्रिथ्व  
प्रह्लाण्ड के दुष्परिमेय वृहत् और दुर्धगम्य सूक्ष्मत्व का  
हिसाब वह जानता है—इस से अधिक आश्चर्य की महिमा इस  
त्रिथ्व में कुछ भी नहीं, या त्रिपुल सृष्टि के निरग्रज काल में  
क्या पता कि और किसी लोक में और किसी चित्त को अधिकार  
करके और कोई भाव प्रकाशित हो रहा है या नहीं। किन्तु इस  
यात को मनुष्य ने सिद्ध कर दिया है कि भूमा ग्रह के आय  
त्त में भी नहीं है, परिमाण में भी नहीं है, कहीं है तो वह अन्तर  
की परिपूर्णता में है।

---

## सौरजगत्

नभ्रगण एक दूसरे से करोड़ों मील दूर रह कर घूम रहे हैं इस गिये यह प्राय निश्चित है कि उन में परस्पर धक्का लगना सम्भव नहीं। किसी किसी का अनुमान है कि प्राय दो सौ करोड़ वर्ष पहले ऐसी ही एक दुसम्भव घटना हो गई थी। उस युग के सूर्य के निकट एक विशाल नक्षत्र आ पहुँचा था। इस नक्षत्र के आकर्षण से सूर्य के भीतर प्रचण्ड वेग से अभिग्राप्य के ज्वार का तरंग लहरा उठी थी। अन्त में आकर्षण के वेग से फोड़ फोड़ तरंग इतनी गहरी कि अन्त में टूट कर बाहर निकल आइ। मूल सम्भव, उस बड़े नक्षत्र ने जिन में से बरियों को आत्म-सात् कर लिया होगा, बाकी टुकड़े सूर्य के प्रबल आकर्षण से गिच कर उसी के चारों ओर चक्कर काटने लगे। उन्हीं छोटे बड़े ज्वलन्त ग्राह्य के टुकड़ों से ग्रहों की उत्पत्ति हुई, पृथ्वी उनमें से एक है। ये टुकड़े प्रमथ तेजोहीन और सख्त हो कर ग्रह का आकार धारण कर गये। आकाश के नक्षत्रों की दूरी सग्या और गति का हिसाब करके देखा गया है कि प्राय ५६ हजार करोड़ वर्ष में एक बार ऐसा उत्पात हो भी सकता है। ग्रह सृष्टि के इस मत को मान लिया जाय तो कहना होगा कि ग्रह परिचय चाँगी नक्षत्र सृष्टि इस विश्व में प्राय अनटनीय

घटना ही है। किन्तु, ग्रहाण्ड की ऋण्ड गोलक सीमा के निरन्तर फूट उठने से नक्षत्र गण क्रमशः एक दूसरे के पास से दूर हटते जा रहे हैं, यह मत यदि मान लिया जाय तो मानना पड़ेगा कि पूर्व युग में जब आकाश-गोलक सकीर्ण था उस समय ताराओं का परस्पर टकरा जाना प्रायः सम्भव होता रहता होगा। उस नक्षत्रों के मेले की भीड़ के समय अनेक नक्षत्रों के उद्भिन्न अंश से ग्रहों की उत्पत्ति की सम्भावना थी, यह बात युक्ति सगत है। फिर ऐसा मान लेना होगा कि जिस अवस्था में हमारा सूर्य किसी अन्य सूर्य से टकराया होगा वह अवस्था उस सनुचित विश्व के काल में आजके समान दुःसम्भव नहीं थी। जिन लोगों ने यह मत नहीं मान लिया, उनमें से अनेकों का कहना है कि प्रत्येक नक्षत्र के विकास की विशेष अवस्था में क्रमशः एक ऐसा समय आता है, जिस समय वह पके सेमर के फल की भाँति फट कर प्रचण्ड वेग से अपने चारों ओर ढेर का-ढेर अग्नि वाष्प बिखेर देते हैं। किसी किसी नक्षत्र से आचानक इस प्रकार का ज्वलन्त गैस निकलते हुए देखा गया है। एक छोटा सा नक्षत्र था, कई वर्ष पहले तक उसे दूरबीन की सहायता के बिना नहीं देखा जा सका था। एक बार अचानक वह दीप्ति में आकाश के उज्ज्वल नक्षत्रों के प्रायः समान हो उठा। फिर कुछ महीने बाद उसका प्रताप इतना क्षीण हो गया कि पहले के समान ही उसे दूरबीन बिना देखा ही न जा सका। उज्ज्वल अवस्था में थोड़े समय में इस नक्षत्र ने चारों ओर पुञ्ज पुञ्ज



ज्वलन्त वाष्प शिखर दिये, और वे ही गीरे धीरे घड़े हो कर जम गये। इस प्रकार इसके द्वारा ग्रह उपग्रहों की सृष्टि हुई, यह अनुमान करना असंभव नहीं है। यह मत अगर मान लिया जाय तो कहना होगा कि करोड़ करोड़ नक्षत्र इस अवस्था के भीतर से गुजर चुके हैं, अतएव सौर मण्डल की भांति ही अपने अपने ग्रहों के दल ले कर कोटि कोटि नक्षत्र-जगत् इस शिखर को पूर्ण गिये हुए हैं। पृथ्वी के सत्र में निम्न जो नक्षत्र हैं, अगर उसके भी ग्रह मण्डली हो तो उसे देखने के लिये जितने बड़े दूरबीन की जरूरत है वह अब तक तैयार नहीं हुआ है।

कुछ ही दिन हुए केमिज के एक तरफ पण्डित ने सौर जगत् की सृष्टि के सत्रध में एक मत का प्रचार किया है। पहले ही कहा है कि आकाश में अनेक शुभ्र नक्षत्र हैं, जो एक दूसरे की प्रदक्षिणा कर रहे हैं। इनके मत से हमारे सूर्य का भी एक जोड़ा था। एक घुमावट अगर ज्योतिष्य पिण्ड ने सूर्य ने उस अनुचर को एक धक्का मारा और उसे अनेक दूर छिटका कर चला गया। उसने जाति जाति भी परस्पर के आरूपण से ज्वलन्त वाष्प का एक बहुत बड़ा आच्छाद सत्र निकल आया था, उसने भीतर इन दोनों की उपादान सामग्री मिली हुई थी। इस वाष्प सूत्र का जो अंश सूर्य के प्रबल आकर्षण से रुक गया था, उसी गिरपतार गैस से हमारी ग्रहमण्डली पैदा हुई है। आयतन में छोटे होने के कारण इनके ठंडे होने में भी देर नहीं लगी, ताप कम होते होते गैस के टुकड़े पहले तरल हुए, फिर और

ठंडे होने पर उनका बाहरी भाग जम कर कड़ा हो गया। लेकिन भीतरी भाग अब भी उष्ण तरल गैसीय पदार्थों से भरा है।

कहना आवश्यक है कि सूर्य का सत्र कुछ गैस है। पृथ्वी के जो सत्र उपादान मिट्टी, धातु, पत्थर आदि के रूप में हैं उनमें का सत्र कुछ सूर्य में प्रचण्ड उत्ताप के कारण गैस की अवस्था में है। किर्रीटिका के अति सूक्ष्म गैस-प्रावरण की बात पहले ही कही गई है। उस स्तर को भेद करके जितना ही जाया जायगा उतनी ही घनतर गैस और उष्णतर ताप दिखाई देगा। अन्त में ऐसे स्तर पर पहुँचना पड़ेगा जहाँ ठसा ठस भरे हुए गैस में स्पर्शता रही रह जाती। इस स्थान पर दस हजार फारेनहाइट डिग्री का ताप है। इस जालोडित स्तर को जितना ही भेद करते जायेंगे उतना ही घनतर और ताप बढ़ता जायगा। अन्त में केन्द्र में १ करोड़ ५० लाख डिग्री का ताप मिलेगा। इस स्थान पर सूर्य का वह वस्तु लोहे और पत्थर से कहीं अधिक घना है फिर भी वह गैस धर्मों में है। इतने उत्ताप में सूर्य का सागरी गैस एक्स रजिम में बदल जाता है। वहाँ एक्स रजिम प्रकाश की चाल से दौड़ती है और छिन्न स्तम्भन इलेक्ट्रॉन गण एक सेकेण्ड में दस हजार मील की तेजी से भागते हैं। परमाणुओं में प्रायः सभी हाइड्रोजन के हैं जिन के इलेक्ट्रॉन छो गये हैं, अर्थात् सभी प्रोटन हैं—वे एक सेकेण्ड में ३ सौ मील के वेग से दौड़ते हैं। और इनके बीच-बीच में लोहे आदि के भारी परमाणु मन्दगति में

हुए, एक सेकेंड में सिर्फ चालीस मील के वेग से दौड़ते रहते हैं।

सूर्य की दूरी की बात अब से रहने की कोशिश न करने एक सापेक्ष व्याख्या से बता दू। हमारे शरीर में जो अनुभूतियाँ प्रदित हो रही हैं, उनकी स्वर फैलाने की व्यवस्था हमारी असम्यक् स्पर्श नाडियाँ कर रही हैं। ये नाडियाँ हमारे शरीर में व्याप्त हो कर मस्तिष्क में जा मिली हैं। टेलिग्राफ के तार की तरह उनके योग से मस्तिष्क को पत्र पहुँचती है। हम समझ सकते हैं कि चीटी ने कहा काटा है, जीभ में जो घाव पदार्थ लगा वह भीड़ा है, दूधका जो कटोरा हाथ में उठाया है वह गर्म है। हमारा शरीर हाथों से लेकर उद्वान तक फैला हुआ विशाल नहीं है, इसी लिये पत्र लगने में देरी नहीं होती, तो भा बहुत थोड़ा सा समय लग ही जाता है वह ज्ञाना कम है कि उसका मापना कठिन है। किंतु पंडितों ने उसे भी मापा है। उन्होंने परीक्षा करके स्थिर किया है कि मनुष्य के शरीर के भीतर से दैहिक घटना प्रति सेकेंड चार सौ फीट के वेग से अनुभूति तर पहुँचती है। अच्छा, अब कल्पना करें कि एक ऐसा दैत्य है जो पृथ्वी पर से हाथ बढ़ाये तो उसका हाथ सूर्य तक पहुँच सके। उस दुसा हसी दैत्य का हाथ जितना भी मजबूत क्यों न हो सूर्य का शरीर स्पर्श करने ही जल कर मम्म हो जायगा। किन्तु जलने की जो पीड़ा और क्षति है उसकी खतर नाडियों की सहायता से

उसके दिमाग तक आते आते प्राय ४० वर्ष लग जायेंगे। उमरे पहले ही अगर वह मर जाय तो उसे पना ही नहा लगेगा।

सूर्य का व्यास ८ लाख ६६ हजार मील का है। ११० पृथ्वी एक ही सीधी रेखा में सटा सटा कर रखें तो सूर्य के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक पहुँच सकती हैं। सूर्य का वजन पृथ्वी से ३ लाख ३० हजार गुना है। इसी लिये उसी मात्रा के घजन की ताकत से वह अपनी ओर खींच सकता है। इस आकर्षण के बल पर सूर्य पृथ्वी को अपनी अधीनता में तो रख सकता है पर बहुत अधिक दूर होने के कारण आत्मगन्त नहीं कर सकता।

एक आलू के ठीक बीच में ऊपर से नीचे तक, एक सलाई घुसेट दी जाय और आलू को उसी सलाई के चारों ओर घुमाया जाय तो वह घूमना जैसा होगा वैसे ही २५ घंटे में पृथ्वी का एक बार घूमना होता है। हम कहते हैं पृथ्वी अपने मेरुदण्ड के चारों ओर घूम रही है। हमारे सलाई वाले आलू के साथ पृथ्वी का अन्तर इतना ही है कि उस प्रकार की कोई सलाई पृथ्वी में नहीं है। मेरुदण्ड जैसा कोई दण्ड ही उसमें नहीं है। जिस स्थान पर सलाई रह सकती, काल्पनिक सीधी लकीर की उसी जगह को हम मेरुदण्ड कहते हैं। जैसे लट्टू। यह अपने भीतर की एक ऐसी ही खड़ी रेखा के चारों ओर घूमता है, जिसे हमने मान लिया है।

मेरुदण्ड के चारों ओर पृथ्वी के एक बार घूमने में चौबीस



के एक किनारे से दूसरे किनारे तक का माप पचास हजार मील है और डेढ़ लाख मील है उस के पेनाम्ना का माप ।

सूर्य के इन धारों के घटने बढ़ने का प्रभाव पृथ्वी पर नाना भाँति से पड़ता है । जैसे हमारी आँखों पर । प्रायः ग्यारह वर्ष की चाली चाली से सूर्य के धारों का आविर्भाव देखा जाता है । परीक्षा करके देखा गया है कि वनस्पति के तने में इन धारों वाले वर्षों की गणनाही अक्षिप्त होती रहती है । बड़े वृक्षों के तने में काटने पर उस प्रति वर्ष का एक गोल चक्रान्वित चिह्न दिखाई देता है । ये चिह्न कहीं कहीं तो स्पष्ट हुए हैं और कहीं कहीं धुंधले । प्रत्येक चक्रदार चिह्न से जान पड़ता है कि वृक्ष प्रति वर्ष कितना बढ़ा है । अमेरिका के एरिजोना के मरुभूमि प्रदेश में डाक्टर टगलस ने देखा है कि जिस साल सूर्य के काले धारों अधिक होते हैं उस साल तने के चिह्न अधिक चौड़े होते हैं । एरिजोना के पाइन वृक्षों के पान सौ वर्षों के चिह्न गिनते गिनते देखा गया कि १६०० ई० से १७२५ तक सूर्य के धारों के लक्षण नहीं मिलते । अन्त में ग्रीनिच मान घट विभाग से खतर लेकर उन्होंने जाना कि उन वर्षों में सूर्य के धारों प्रायः नहीं थे ।

आजकल सूर्य के धारों बढ़ते जा रहे हैं । सन् १९३८ या १९३९ में उनके पूरा पूरा बढ़ जाने की बात है ।

गटे लगते हैं। सूर्य भी अपने मेघदण्ड को चारों ओर घूमता है। उसके घूमने में जितना समय लगता है, वह जिस उपाय से जाना गया है, वह यन्त्र दू। गुरु सारे जगत् प्रकाश से आवे चाँधिया नहीं जाना, उस समय सूर्य की जोर देखा जाय तो शायद मालूम होगा कि उसमें काले काले गटे हैं। एक-एक काले धात्रे कभी कभी इन्हीं गटे हो कर प्रकाशित होते हैं कि सारे ग्रह उपग्रह मित्र कर भी उनके बगल नहीं होते। छोटे छोटे धात्रों के लोप होते ज्यादा समय नहीं लगता पर गटे गटे गटे दो-दो तीन नान समाह तक रहते हैं। दूरबीन ले कर देखने से नान पट्टा है कि ये क्रमशः दाहिनी ओर घूम रहे हैं, किन्तु असल में इन सब को अपने शरीर में लिये हुए सूर्य ही घूम रहा है। उन्हीं काले धात्रों का अनुसरण करके इस घूमने के समय का हिसाब जाना जा सका है। प्रमाणित हुआ है कि पृथ्वी २४ गटे में घूमता है और सूर्य २५ दिन में।

सूर्य के धात्रे सूर्य के बाहरी आवरण में विशाल गहर हैं। यहाँ से उत्तम रंग भुण्डली के आकार में चार फाटती हुई बाहर निकल रही है। हमारा एक एक नेत्र प्रवेश है जो घोर काग है, उसका नाम है आम्ब्रा उसने चारों ओर उस से कम काली रेष्टनी है, जिसका नाम है पेनाम्ब्रा। चारों ओर की नीति भी तुलना में उन्हें काला देखा जा रहा है,—वह दीप्ति अगर बढ़ कर दी जाती तो इनकी ज्योति भी अत्यन्त तीव्र दिगाइ देती। सूर्य का जो धात्रा बहुत बड़ा है उसके आम्ब्रा

ये एक किनारे से दूसरे किनारे तक का माप पचास हजार मील है और डेढ़ लाख मील है उस के पेराम्पा का माप ।

सूर्य के इन धर्मों के घटने पड़ने का प्रमाण पृथ्वी पर जाता भाति से पड़ता है । जैसे हमारी जाग्रहवा पर । प्राय ग्यारह वर्ष की धारी चारी से सूर्य के धर्मों का जाग्रिभाव देखा जाता है । परीक्षा करके देखा गया है कि जाग्रति के तने में इन धर्मों वाले वर्षों की गजाली अविन होनी रहती है । बड़े धर्मों के तने में काटने पर उस प्रति धर्म का एक गाल चक्रदार चिह्न दिखाई देता है । ये चिह्न कहीं कहीं तो सटे हुए हैं और कहीं कहीं दूर दूर । प्रत्येक चक्रदार चिह्न से जान पड़ता है कि धर्म प्रति वर्ष वृद्धि पाता है । अमेरिका के एरिजोना के मरुभूमि प्रदेश में डाक्टर डगलस ने देखा है कि जिस साल सूर्य के काले धर्मों अधिक होते हैं उस साल तने के चिह्न अधिक चौड़े होते हैं । एरिजोना के पान धर्मों के पान सौ वर्षों के चिह्न गिनते गिनते देखा गया कि १६०० से १७०० तक सूर्य के धर्मों के लक्षण नहीं मिलते । अन्त में ग्रानिच मान यत्र विभाग से पार लेकर उन्होंने जाना कि उन वर्षों में सूर्य के धर्म प्राय नहीं थे ।

जाग्रत सूर्य के धर्म बढ़ते जा रहे हैं । सन १८३८ या १८३९ में इनके पूरा पूरा पड़ जाने की बात है ।



## ग्रहलोक

यह पहले ही बताया गया है कि ग्रह किसे कहते हैं। सूर्य नभग्रह है, पृथ्वी ग्रह, जहाँत सूर्य से टूट कर निकल जाया हुआ टुकड़ा, जिस का प्रकाश ठंडा हो कर बुझ गया है। किसी किसी ग्रह में गर्मी भरा हो सकती है, पर गैशली नहीं है। सूर्य के चारों ओर इन ग्रहों के घूमने का रास्ता चर रेखा के समान गोलाकार है। किसी का रास्ता सूर्य के निकट है और किसी किसी का सूर्य से बहुत दूर है। किसी को सूर्य के चारों ओर घूम आने में साल भर से भी कम समय लगता है और किसी को सौ साल से भी ऊपर। जिस ग्रह को घूमने में जितना भी समय क्पो न लगे इस घूमने का एक निश्चित नियम है, इसका व्यतिक्रम कभी नहीं होता। सूर्य परिवार के सभी ग्रहों को, चाहे वे दूर के हों या निकट से, छोटे हों या बड़े पश्चिम से पूर्व की ओर प्रदक्षिणा करनी पड़ती है। इस से यह जाना जाता है कि सभी ग्रह एक ही समय चक्का घा कर सूर्य में से छिटक पड़े होंगे, इसी लिये उनका चलने का क्रम एक ही ओर हुआ है। चक्का हुई गाड़ी से उतरते समय जिम ओर गाड़ी जाता रहती है, उसी ओर शरीर में एक झोंका लगता है। गाड़ी से अगर पांच यादमी उतरें तो उन पाँचों को एक ही ओर से

भोका लगेगा। उसी प्रकार घूमते हुए सूर्य से निकल आने समय सभी ग्रहों का भुकाव एक ही ओर हुआ है। उनके इस चरने की प्रवृत्ति से सिद्ध होता है, वे सभी एक ही जाति के हैं, सब का भुकाव एक ही ओर है।

सूर्य के सब से निकट है बुध ग्रह, अंग्रेजी में इसे मरुती कहते हैं। यह सूर्य से साढ़े तीन करोड़ मील दूर है अर्थात् पृथ्वी जितनी दूरी पर घूम रही है उसके प्रायः तीन भाग का एक भाग। बुध के शरीर में कुछ धुंधले धब्बे दिखाई देने हैं उसको लक्ष्य करके जाना गया है कि उसका एक ही पीठ सूर्य की ओर है। सूर्य के चारों ओर घूम जाने में उसे ८८ दिन लगते हैं। अपने मेरुदण्ड के चारों ओर घूम आने में भी उसे उतना ही समय लगता है। अर्थात् उसका दिन जितना बड़ा होता है, साल भी उतना ही बड़ा होता है। सूर्य की प्रदक्षिणा करते समय पृथ्वी के घूमने का वेग प्रति सेकण्ड उन्नीस मील है। बुध ग्रह का वेग इसे मात षे गया है, उस का वेग प्रति सेकण्ड तीस मील है। एक तो उसका रास्ता छोटा है दूसरे उसमें हडबडी बहुत अधिक है, इसी लिये पृथ्वी के चौथाई समय में ही उस का प्रदक्षिण समाप्त हो जाता है। बुध ग्रह ने प्रदक्षिण का जो रास्ता है, सूर्य ठीक उसके केंद्र में नहीं है, जरा एक किनारे है। इसी लिये घूमते समय बुध कभी तो सूर्य के अपेक्षा रत निकट आता है और कभी दूर चला जाता है।

पृथ्वी का व्यास आठ हजार मील का है, और बुधका उसके

आधे से भी कम। यह ग्रह सूर्य के इतने निकट रही का कारण बहुत अधिक ताप पाना है। जितनी गर्मी से पानी गोलने लगता है, कुछ ग्रह के ताप की मात्रा उस के तीनगुने से भी अधिक है। इतनी गर्मी से पानी भाप या धूर हो जाता है। सिर्फ यही नहीं, इतने ताप में हवा के परमाणु इतनी तेजी से चलने लगे हैं कि कुछ ग्रह उन्हें पकड़ कर रग नहीं सकता, वे बस छोटे-छोटे शून्य में दीड लगाने हैं। हवा के परमाणु भगाड़े म्यमात्र के हैं। पृथ्वी पर वे सेकेंड में महज दो मील के दूरी से भागा करने हैं, इसी लिये वायुमण के गल पर पृथ्वी उन्हें समाल पाती है। किन्तु यदि किसी कारण से ताप बढ़ जाता तो वे प्रति सेकेंड सात मील के दूरी से भाग पड़ते फिर तो पृथ्वी भी अपना हवा की अधिक समय तक कायू में र रग सकती।

जो जितानी गेग विषय जगत के अरायजनगीश हैं उनका एक प्रधान कार्य है, ग्रह नक्षत्रों का माप ठीक करना। इस काम में मामूली तारा और ग्रह से काम नहीं चलता, इसी लिये कौशल-पूवक उनसे गहर उम्सूल की जाती है। यही बात समझा कर कहता ह। अपना बगे कि पय लुद्धकता हुआ गोला आकर अचानक पय पयिक को घटा मार गया, पयिक दस हाथ दूर जा गिरा। कितने बडे वजन का गोला घटा मारे तो आदमी इतना दूर तक विचलित हो सकता है, यह नियम अगर मालूम हो तो इस दस हाथ के माप पर से हिसाब करके गोले का वजन





निकाल लिया जा सकता है। एक बार अचानक इसी प्रकार का हिसाब करने का सुयोग मिलने से बुध ग्रह का वजन निकालना आसान हो गया। यह सुयोग एक धूमकेतु के कारण मिला। यह बात जताने के पहले यह बता देना जरूरी है कि धूमकेतु गण किस जाति के ज्योतिष्क हैं। ग्रहगण सूर्य के अपने हैं, किन्तु धूमकेतुगण एक दम विराने। वे श्रुत ग्र बाहर से अचानक सूर्य के इलाके में आ पड़ते हैं। किसी प्रकार एक बार सूर्य के चारों ओर घूम कर वे तत्काल विरागो हो कर निकल पड़ते हैं।

धूमकेतु शब्द का अर्थ है, धुएँ की पताका। उसको चेहरे को देख कर ही यह नाम दिया गया है। उसका मुण्ड गोल है और उसके पोछे एक उज्ज्वल लकीर पताका फहरा रही है। साधारणतः यही उसका आकार है। यह पताका अत्यन्त सूक्ष्म प्राण की प्रती होती है। वह इतना सूक्ष्म है कि पृथ्वी कभी कभी इसे मदन करती हुई निकल गई है फिर भी हम अनुभव न कर सके। उसका मुण्ड उल्का पिण्ड से बना है। बीच बीच में कोई कोई धूमकेतु सूर्य के राज्य में घुस जाते हैं और फिर बाहर नहीं निकल पाते, सूर्य के शासन में पड़ हो कर अनुचरो के दल में भरते हो जाते हैं। तब उन्हें भी यथा नियम सूर्य की प्रदक्षिणा करनी होती है, प्रदक्षिणा का वह माग और समय पक्की तोर पर निश्चित हो जाता है।

सौर परिवार के इसी प्रकारके एक नये सदस्य धूमकेतु के

प्रदक्षिण मार्ग में एक बार व्याघ्रान उपस्थित हुआ। जब यह बुध की कक्षा के घाम में गुजर रहा था, उसी समय बुधके साथ गीन्धनान के कारण उसका रास्ता गड़बड़ा गया। गैर गाड़ी जब पट्टरी में हट जानी है तो फिर से ट्रेक कर उसे पट्टरी पर चढ़ा लिया जाता है पर उस से टाइम टेबुल का निर्दिष्ट समय घीत जाता है। यहां भी ऐसा ही हुआ। धूमकेतु जब अपने रास्ते पर लौटा तो तत्काल उसका समय उत्तीर्ण हो चुका था। धूमकेतु को निस परिमाण में दिग देने में बुध ग्रह के जितने आकर्षण का जोर लगा था, उस पर से हिसार लगाया जाने लगा। जिसका वजन जितना होता है उतनी ही शक्ति से वह गींचा करना है, यह जानी हुई बात है, इसी नियम पर ही बुध ग्रह का वजन निकाला गया। देखा गया कि बुध ग्रह के समान इसीस ग्रहमें चढ़ाये जाँय तब वही वजन पृथ्वीके बराबर होगा।

बुध ग्रहके रास्ते पर ही शुक्र ग्रह के प्रदक्षिण की पारी आती है। सूर्य की एक बार घूम जाने में उसे २०० दिन लगते हैं, अर्थात् हमारे साढ़े मान महीने का उसका साल है। उसके मेरुदण्ड पर चक्कर काटने का वेग क्या है, इस विषय के तर्कों की अब भी समाधा नही हुई। यह ग्रह साल में एक बार सूर्यास्त के बाद पश्चिम क्षितिज पर दिगई देता है, उस समय इसे संध्यातारा कहते हैं, फिर यही ग्रह एक समय सूर्यादय के पहले पूर्व जोर उदय होता है, उस समय उसे शुक्र तारा कहते

हैं। किन्तु असल में यह तारा है ही नहीं, खूब चमरने-दमकने के कारण जनता के पास से इसने तारा का खिताब पाया है। इसका आयतन पृथ्वी से जरा सा कम है। इस ग्रह का मार्ग पृथ्वी के मार्ग की अपेक्षा और भी तीन करोड़ मील सूर्य के निकट है। यह भी कम नहीं है। यथोचित दूरी त्वा कर चलता है, फिर भी इसके भीतर की गहर अच्छी तरह मालूम नहीं। इस लिये नहीं कि यह सूर्य के प्रखर प्रकाश के आवरण से ढका है। बुध सूर्य के प्रकाश से ढका हुआ है, किन्तु शुक्र अपने ही घने मेघ से ढका है। विज्ञानियों ने हिसाब करके देखा है कि इस ग्रह का उत्ताप पृथ्वी से प्रायः ६० डिग्री अधिक होना चाहिये। इतने उत्ताप से जल का कोई रूपान्तर नहीं होता, इसी लिये यह आशा की जा सकती है कि वहाँ जलाशय और मेघ दोनों का अस्तित्व है।

अतः तब शुक्र ग्रह में आविसज्जन या जलीय वाष्प का कोई लक्षण नहीं पाया गया। उसके ऊपर के घने मेघावरण से भीतर की अवस्था ढकी हुई है। मेघ के ऊपरी सतह से जितना कुछ उद्वाज किया जाता है उससे प्रमाणित होता है कि उसके आविसज्जन की पूंजी एतन् ही कम है। वहाँ जिस गैस का स्पष्ट प्रमाण पाया जाता है, वह है आकारिक गैस। मेघ के ऊपरी सतह पर उसकी मात्रा पृथ्वी की उस गैस से हजारों गुना अधिक है। पृथ्वी पर इस गैस का प्रधान उपयोग पेट पौधों के प्राण धारण में होता है अन्यान्य जीव जन्तुओं के प्राण धारण



के गिये जाविसजन का व्यवहार होता है। प्राण धाम्ण के इन दो जरूरी पदार्थों में से केवल एक ही शुक्र पर है। यह आश्चर्य की बात है कि शुक्र पर जलीय प्राण का पता नहीं चलता। तो फिर सोचना पड़ता है कि शुक्र का घना मेघ किमि चीज का है। सम्भव यह है कि मेघ के ऊंचे स्तर पर जल ठंडा होकर इतना जम गया कि उस से वाष्प नहीं निकलता। शुक्र पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य के निजद है, जतपर मान लिया जा सकता है कि ग्रह के ऊपरी सतह के उत्ताप से समुद्र से अत्यधिक परिमाण में भाप उठा करता होगा और उसी से ऐसा घन मेघ जम गया होगा।

सौर मंडली में शुक्र ग्रह के बाद ही पृथ्वी का वासन है। पहले जोर ग्रहों की बात करते वक के बाद में पृथ्वी की चर्चा की जायगी।

पृथ्वी के बाद की पगत में मंगल ग्रह का स्थान है। यह लाल रंग का ग्रह और सप्त ग्रहों की अपेक्षा पृथ्वी के सप्त से निजद है। इसका आयतन पृथ्वी के आठवें हिस्से के बराबर है। सूर्य के चारों ओर घूम आने में इस ६८७ दिन लगते हैं जिस रास्ते में यह सूर्य की प्रदक्षिणा कर रहा है वह बहुत-बुछ अंटे की तरह का है, इसी गिये घूमते समय एक बार वह सूर्य के पास आता है और फिर दूर चला जाता है। अपने मेरुदण्ड के चारों ओर घूमने में इसे पृथ्वी से सिर्फ आध घंटा अधिक समय लगता है इसी लिये वहां के दिन रात हमारी पृथ्वी की

दिन रात से कुछ बड़े हैं। जिस परिमाण में इस ग्रह के ऊपर वस्तु है वह पृथ्वी की चन्द्र मात्रा का एक दशमांश है, इसा लिये आकर्षण की शक्ति भी उम्मी परिमाण में कम है।

सूर्य के आकर्षण से मंगल ग्रह को जिस रास्ते चलना चाहिये था, उसकी अपेक्षा उसका चाल में थोड़ा सा फर्क है। पृथ्वी के आकर्षण के कारण ही इसकी यह दशा है। घजन के अनुसार आकर्षण के जोर से पृथ्वी मंगल ग्रह को जितना चिन्न लिन कर सकी है, उसी पर से हिसाब करके पृथ्वी का घजन ठीक किया गया है। इसी सिलसिले में सूर्य की दूरी भी जान ली गई है। क्यों कि मंगल को सूर्य भी गोचर रहा है। सूर्य कितनी दूर रहेगा तो दोनों आकर्षणों का काटछाट हो कर मंगल का इतनी दूर त्रिचलित होना समझ है, यह बात गणित करने निकाली जा सकती है। मंगल उहुत बड़ा ग्रह नहीं है, उसका घजन भी अपेक्षाकृत कम है, इसी लिये उसी मुताबिक आकर्षण का जोर न होने से आशङ्क थी कि वह हरा को रो देगा। किन्तु सूर्य से दूर होने के कारण वह इतना उत्ताप नहीं पाता जिस से परमाणु गर्म हो कर गायब हो जाय। किन्तु यह बात अब भी स्थिर नहीं हो सकी है कि उसकी हरा में किस किस वाष्प की मिलावट है।

सूर्य से मंगल की दूरी पृथ्वी की दूरी से अधिक है, इस लिये इस में कोई सन्देह नहीं कि यह ग्रह ठंडा है। दिन के समय विपुल प्रदेश में शायद कुछ गर्मी रहती हो किन्तु रातको

निसन्देह यहाँ जमाने से भी अधिक ठंड पड़ती है। यहाँ की टोपी पहले हुए उसके मेरु प्रदेश की तो बात ही क्या है।


पृथ्वी में मंगल ग्रह के साथ में बहुत दिनों तक एक चक्का रहा है। एक बार एक इटली जासी विज्ञानी ने मंगल में लरी लरी लकीरें देखी और निश्चय किया कि ग्रह के वासिन्दों ने निश्चय ही मेरु प्रदेश से एक त्रिगुलित पानी पाने के लिये ये लरी लरी नहरें निकाली हैं। फिर किसी किसी विज्ञानी ने कहा कि यह आगों की गर्मी है। आज एक ज्योतिष्य लोक का लोग मनुष्य ने कैमरा चलाया है। कैमरे से खींची हुई तस्वीर में भी बाली लकीरें दिगी हैं। किन्तु ये तस्वीरें नहरें ही हैं और बुद्धिमान जीवों की ही रूतियाँ हैं, यह बात चिन्तक अन्दाजे पर बड़ी गई है। अग्रश्य ही इस ग्रह पर प्राणी का रहना असंभव नहीं है, क्योंकि यहाँ हवा और जल है।

दो उपग्रह मंगल ग्रह के चारों ओर घूमा करते हैं, एक को एक घंटे लगाने में ३० घंटे लगते हैं और दूसरे को ७॥ घंटे, जहाँ मंगल ग्रह के एक दिन रात में वह उमे प्रायः तीन बार घूम जाता है। हमारे चाँद की अपेक्षा ये प्रदग्निष का कार्य बहुत जल्दी खतम कर लेते हैं।

मंगल और बृहस्पति ग्रह के बीच में अनेक खाली जगह देखा कर पंडित लोगों को सन्देह हुआ और वे खोज में लग गये। पहले बहुत छोटे छोटे चार ग्रह दिग्राई दिये। फिर देखा गया कि वहाँ बहुत हजार ग्रह-खंडों की भीड़ है। ये झुंड बाँध कर

सूर्य के चारों ओर घूम रहे हैं। उनका नाम ग्रहिका रख लिया जाय। अंग्रेजी में कहते हैं asteroids। जिसका दर्शन पहले मिला उसका नाम सीरिस (Ceres) रखा गया। इसका व्यास चार सौ पचीस मील है। ईरोस (Eros) नामक एक ग्रहिका है, सूर्य प्रदक्षिण के समय यह पृथ्वी के जितना निकट आती है, उतना और कोई ग्रह नहीं आता। ये ग्रहिकाये इतनी छोटी छोटी हैं कि इनके भीतर की कोई भी खज्र हमें नहीं मिलती। इन सब का मिल कर जितना वजन है वह पृथ्वी के वजन का एक चतुर्थांश भा नहीं हैं। मंगल से भी कम है, नहीं तो मंगल के चलने के रास्ते में आकर्षण कर कुछ गड़बड़ी पैदा कर सकती।

ग्रहिकाओं को किसी समूचे ग्रह के खट ही मान लिया जा सकता है। अपने भीतरी गोलमाल से या किसी पड़ोसी ग्रह के आघात से एक दिन इन के घर में विप्लव का समय गुजरा है। उही इतिहास विस्मृत दुयांग अपने अप्यात कूटा-कर्कटों को सूर्य के चारों ओर घुमा कर किसी प्रकार मर्यादा की रक्षा कर रहा है।

इन ग्रहिकाओं के प्रसंग में और एक दल की बात बताना चाहिये। ये भी बहुत छोटे छोटे हैं और कुछ बाध कर एक निर्दिष्ट रास्ते में सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। ये उल्का पिंड हैं। पृथ्वी पर निरन्तर इनकी वर्षा जारी है, बूझने कणों के साथ इनका जो  जाता है, वह निनान्त कम

पृथ्वी के ऊपर यदि हवा का चंदोरा १ टंगा होता तो इन शुद्ध शब्दों के आक्रमण से हमारी रक्षा न हो सकती।

दिन हो या रात, उल्कापात कुछ-न-कुछ होता ही रहता है। लेकिन विशेष विशेष महीने की विशेष विशेष तिथियों को उल्काओं की बाँछार अधिक होती है। २१ वा अप्रैल, ६, १०, और ११ वीं आगस्त २२, १३, १४ और २७ वीं नवम्बर की रात को इस उल्कापात की आतिशयानी देगने की चीज है। तिथि क्षण का इस प्रकार का उधा सारा नियम देकर धिमांनी लोग इसका कारण गोजने लगे।

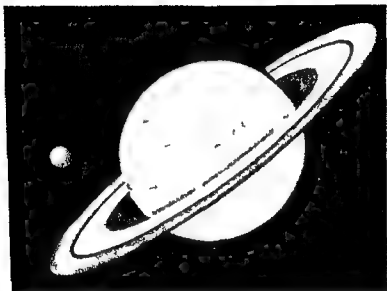
रात यह है कि उनका एक विशेष मार्ग है। किन्तु ग्रहों की तरह ये अकेले नहीं चलने। ये दुपगेक के दल उद्य दिशियों की जात के हैं। लग्य लग्य की सरया में भीड़ किये हुए पर ही समते चरते हैं। उर्य के विशेष विशेष दिन को पृथ्वी का रास्ता ठीक उन्ही जगहों पर पहुच जाता है जहा उनकी जमात रहती है। पृथ्वी का आकर्षण ये सम्हाल नहीं सकते। निरंतर इनकी भंडी होनी रहनी है जो पृथ्वी की धरा में मिल जाती है। कभी कभी उड बडे दुम्डे भी आ गिरते हैं और फट फटा कर चारो जोर तहस नहस कर देते हैं। सूर्य के इलाके में अनधिकार प्रवेश करने वाले धूमकेतुओं के दुर्भाग्य ये निदर्शक हैं। ऐसा भी सुना जाता है कि युगायुग में जब पृथ्वी के अंतर में ताप अधिक था, उस समय अग्नि के उत्पात से पृथ्वी के भीतर का सामग्री अपने ऊपर छिटक गई थी कि



होना है तभी सूर्य का प्रकाश न मिटने के कारण उपग्रह पर ग्रहण लग जाता है। किन्तु मध्यमर्ती ग्रह के पास यदि अपना प्रकाश हाता तो वह उपग्रह को आलोकित कर सकता और ग्रहण हो ही नहीं सकता। हमारे चांद के ग्रहण के नियम में भी यही बात लागू है। ज्योतिर्हीन पृथ्वी जब चन्द्रमा के सामने में सूर्य को आँट में छिपा लेती है तो उस समय वह चन्द्रमा को छाया ही दे सकती है, प्रकाश नहीं।

बृहस्पति के बाद को पंक्ति में शनि ग्रह है।

यह ग्रह सूर्य से ८८ करोड़ ६० लाख मील दूर है। सूर्य की एक प्रदक्षिणा करने में इसे २९½ वर्ष लगते हैं। शनि का वेग बृहस्पति से भी कम है—एक सेकेंड में केवल ६ मील। बृहस्पति को छोड़ कर सौरजगत् के अन्य ग्रहों की अपेक्षा आकार में यह बहुत बड़ा है। इनका व्यास पृथ्वी के व्यास से प्रायः १ गुना है। पृथ्वी से नौ गुना बड़ा हो कर भी अपनी धुरा पर एक चक्कर लगाने में उसे पृथ्वी के आधे से भी कम समय लगता है। इतने जोर से घूमने के कारण उस वेग के द्वारा से इसका आकार कुछ चपटा सा हो गया है। इतना बड़ा इसका आकार है फिर भी इसका वजन पृथ्वी से सिर्फ ९५ गुना अधिक है। इतना हल्का होने के कारण ही विशाल ताय हो कर भी पृथ्वी की अपेक्षा इसका आकर्षण अधिक नहीं हो सका। एक मेघ का नाश्रण इसे घेरे हुए है जिसका आकार बीच-बीच में बदलता दिखाई देता है।



शनि और पृथ्वी के आयतन की तुलना





शनि के दस उपग्रह हैं। उन में जो सत्र से बड़ा है वह आयतन में बुध ग्रह से भी बड़ा है। यह प्रायः ८ लाख मील दूर रहता है और इसकी प्रदक्षिणा १६ दिन में समाप्त होती है।

शनि ग्रह की घेष्टनी की वर्णचंद्रा की परीक्षा करके देखा गया है कि इसका जो अंश ग्रह के निकट रहता है उसका चलन वेग ग्रह के दूरियों अंशों की अपेक्षा बहुत अधिक है। यह घेष्टनी अगर अचण्ड चक्र की भाँति होनी तो घूमनेवाला पाह्ये के नियमानुसार वेग बाहर की ओर ही अधिक होता। किन्तु शनि ग्रह की घेष्टनी अगर चण्ड खण्ड वस्तुओं का घनी हो तो इन घन्तुओं के जो दल ग्रह के पास होंगे वे ही आक्रमण के जोर से अधिक तेजी से घूमेंगे। इन लाख लाख टुकड़े उपग्रहों के अतिरिक्त दस बड़े बड़े उपग्रह अलग अलग रास्ते में शनिग्रह का प्रदक्षिणा कर रहे हैं।

जिस प्रकार इस ग्रह के चारों ओर कुछ बड़े कुछ छोटे टुकड़ों का सृष्टि हुई, इस सत्य में विज्ञानियों का जो मत है उसका कुछ अंश यहाँ लिखा जा रहा है। ग्रह के प्रबल आक्रमण में पड़ कर कोई कोई उपग्रह अपना गोल आकार नहीं रखा रख सकते, उनका चेहरा आगिकार बहुत कुछ अंडे के समान हो जाता है। अन्त में एक ऐसा समय आता है जब अधिक उर्दाश्व न कर सकने के कारण उपग्रह टूट कर दो गड हो जाता है। य दोनों छोटे टुकड़े और भी टूटते रहते हैं, इस प्रकार एक ही उपग्रह से लाख लाख टुकड़ा का हो जाना असंभव नहीं है।

चाँद को साण्ड दिन यह दशा होने का है। विनानी लोग कहते हैं कि प्रत्येक गृह को एक अदृश्य मंडरी का घेडा घेरे हुए है, इसे गतरे का घेगा कहते हैं। इस के भीतर आ गटने ही उपग्रहों का शरीर फूट उठता है, पहले घट अंडे की तरह तथा सा आकार धारण करता है फिर टूटने लगता है। आगिर कार ये टुकड़े मुट राध कर गृह के चारों ओर चक्कर लगाने लगते हैं। विगानियों के मन से बृहस्पति का प्रथम उपग्रह इस गतरे के घेरे के पास आ गया है, और कुछ दिन बाद इस घेरे में घुसते ही उसके टुकड़े हो जाँयगे। उस समय शनिगृह की तरह बृहस्पति को भी चारों ओर से एक उज्ज्वल घेष्टी घेर लेगा। शनि के चारों ओर जो घेष्टी है उसकी सृष्टि के सत्रध में पडितों का अनुमान है कि शनिगा एक उपग्रह घूमने घूमने इस गतरे घेरे में आ घुसा या। नतीजा यह हुआ कि उपग्रह टूट कर पट पट हो गया और आज भी इस गृह की परिजमा कर रहा है।

चाँद पृथ्वी के गतरे के घेरे से अनेक दूर है, इसी लिये उसमें जो परिवर्तन हुए हैं वे बहुत अधिक नहीं हैं। पृथ्वी के आक्रमण के घेग से वह धीरे धीरे जागे उठता आ रहा है, इसके बाद जब इस घेरे के ग्लाने में प्रवेश करेगा तो टुकड़े-टुकड़े हो जायगा और ये टुकड़े पृथ्वी-गृह को घेर कर शनि गृह की नकल करते रहेंगे। उस समय चाँद पर भी 'शनि की दशा' होगी।

शनि सय से बृहस्पति की अपेक्षा कहा अधिक दूर है—इसी



१० प्र० ४ मि० में यह ग्रह एक बार अपनी धुरी पर घूम रहा है, चार उपग्रह अपने अपने रास्ते में निरन्तर इसकी परिक्रमा कर रहे हैं।

यूरेनस के आगिराग के कुछ ही दिन बाद पंडितों ने इस ग्रह का वैहिसारी चाल चलन देखा कर निश्चय किया कि इस ग्रह ने किसी और के आकर्षण में पड़ कर पथ का नियम तोड़ा है। रोजते रोजते वह ग्रह भी निरग्न। उसका नामकरण हुआ नेपचून।

सूर्य से इसकी दूरी २७८ करोड़ ३५ लाख मील है और प्राय १६४ वर्ष में यह सूर्य की एक प्रदक्षिणा करता है। इसका व्यास प्राय ३३००० मील का अर्थात् यूरेनस से कुछ बड़ा है। दूरबीन से एक छोटी सी हरा वाली की तरह दिखाई देता है। इसका एक उपग्रह २ लाख २० हजार मील दूर रह कर ८ दिन २१ घंटे में इस के चारों ओर एक बार घूम आता है। उपग्रह की दूरी और इसके आयतन पर से हिसाब लगा कर निश्चय किया गया है कि इसका वस्तु पदार्थ पानी से कुछ भारी है और घनत्व में प्राय यूरेनस के समान है। यह ज्ञान अब भी एकदम निश्चित नहीं हुआ कि इस ग्रह के अपनी धुरी पर एक बार घूमने में कितना समय लगता है।

नेपचून के आकर्षण से यूरेनस को जिस नये रास्ते पर चरना चाहिये था, हिसाब करके देखा गया कि यूरेनस ठीक उस रास्ते पर नहीं चर रहा है। इस से यह समझा गया

कि नेपचून के सिवा भी इस ग्रह के गतिपथ के बाहर कोई और एक ज्योतिष्क वर्तमान है। सन् १९३० में एक नया ग्रह और निकल आया। इसका नाम प्लूटो रखा गया है। यह ग्रह इतना छोटा और इतनी दूर है कि दूरबीन की सहायता से भी यह उड़ी कठिनाता से दिखाई देता है। कैमेरा से चित्र खींच कर इसका अस्तित्व निःसन्देह सिद्ध कर दिया गया है। यह ग्रह ही सूर्य से सब से अधिक दूरी पर है, इसी लिये यह प्रकाश और गर्मी इतनी थोड़ी मात्रा में पा रहा है कि हम उसकी अवस्था की कल्पना भी नहीं कर सकते।

लगभग ३५ फीट की दूरी से ढाई सौ वर्षों में यह ग्रह सूर्य की एक प्रदक्षिणा समाप्त करता है।

प्लूटो ग्रह बहुत छोटा है, इस लिये उसके आकर्षण का वेग भी बहुत कम है। नतीजा यह हुआ है कि वह अपनी हवा को भी नहीं सम्हाल सकता। वह इनके हाथ से जाती रही है। इसकी ताप मात्रा २३० डिग्री सेन्टीग्रेड से भी नीचे होगी। इतनी सर्दीमें अत्यन्त दुरन्त गैस भी तरल, यहाँ तक कि ठोस हो जाती है। वहाँ अकार्बिक गैस, जामोनिया, नाइट्रोजन, प्रभृति वायव्य पदार्थ भी जम कर वर्षा बन गये हैं और उन से निश्चय ही ग्रह ढक गया है। किसी किसी का मत है कि सौर लोक की अन्तिम सीमा पर कई छोटे छोटे ग्रह बिखरे हुए हैं, प्लूटो उन्हीं में से एक है। लेकिन इस मत के लिये कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिला है, कभी मिलेगा भी कि नहीं, कौन

जाने। आज की अपेक्षा रहा अधिक शक्तिशाली दूरवीन यदि उस दूरत्व की यंत्रिका (पर्दा) उठा सके नमी सशय का समाधान होगा।

---

## भूलोक

अन्य ग्रहों के आकार प्रकार और चलने फिरने के सम्बन्ध में बहुत ही कम खबर इकट्ठी की जा सकी है, अनेकों पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जिसके शरीर की गठन रीति ठीक तौर पर बहुत कुछ जानी जा सकी है। गैसीय अवस्था पार करके जल से उसका शरीर कठोर हुआ है तभी से उसके शरीर में इतिहास के नाना चिह्न अंकित होते चले आये हैं।

पृथ्वी के ऊपर का स्तर किसी चीज से ढका न होने के कारण शीघ्र ही ठंडा हो फर कड़ा हो गया, और भीतर का स्तर गर्म होने का कारण वहाँ तरल और गैसीय पदार्थ ही रह गये। दृढ़ की मलाइ ठंडा होते होते जिस प्रकार सिजुड जाती है उसी प्रकार पृथ्वी का ऊपरी सतह भी ठंडा होते होते सिजुड ने लगा। सिजुडने पर दूध की मलाइ जिस मात्रा में ऊबड़ जायड हो जाती है उसकी तरफ हमारा ध्यान ही नहीं जाता, किन्तु सिजुडी हुई पृथ्वी की असमाप्ता ऐसी मामूली नहीं है कि उसे हँस कर उठा दिया जाय। चूकी नीचे का स्तर इस

दोने योग्य पक्का नहीं हुआ था इस  
के कारण ऊपर का कड़ा स्तर



ऊँचा नीचा होता रहा, इससे पहाड़ पतल दिगवाई दिये। बृहद् आदमी के माथे का चमटा सिझुड कर जिस प्रकार बलि पड जाती है उसी प्रकार माना ये पृथ्वी के ऊपरी चमडे की रलियाँ हैं। सारी पृथ्वी की ग्रहन गर्भीरता की नुग्ना में ये पहाड़ पतल मनुष्य के चेहरे के रलिचिह्न से कम ही हैं, अधिक नहीं।

प्राचीन युग की पृथ्वी के सिझुडे हुए ऊँड़ पायड स्तर में कहा गङ्गे हो गये और वही पहाड़ निरल जाये। गङ्गे तर भी पानी से भरें नहीं थे। क्यों कि उस समय पृथ्वी की गर्मी के कारण पानी भी भाप के रूप में ही था। गीरे धीरे मिट्टी टट्टी हुई, वाष्प पानी हो गया। उसी पानी से भर कर गङ्गे समुद्र हो गये।

पृथ्वी के बहुत से पानी के भाप तो तरल हो गये, किन्तु हवा की प्रधान गैसे जैसे ही रह गई। उन्हें तरल करना सहज नहा। क्यों कि जितनी सन्धियों में वे तरल होते उतनी सन्धियों में पानी जम कर बर्फ हो जाता और पृथ्वी बर्फ के कच से आच्छादित हो रहती। इस औसत परिमाण की गर्मी सन्धियों से आक्सिजन, नाइट्रोजन प्रभृति हवा के गैस वाले पदार्थ सहज ही चल फिर रहे हैं और हम साँस लेकर जी रहे हैं।

पृथ्वी के भीतर की जोर का सञ्चन थय भी एक दम थन्द नहीं हो गया है। उसी के हिलने के कारण अचानक कहीं नीचे की जगह कुछ हट जाती है तो ऊपर का कडा आवरण टूट कर उसे दबा देता है, इस प्रकार पृथ्वी के ऊपरी सतह को हिला

देता है और भूकम्प हो जाता है। फिर किसी किसी स्थान पर दृष्टे दृष्ट दबाव से नीचे का तप्त तरल पदार्थ ऊपर उछल आता है।

पृथ्वी की भीतरी अवस्था जानने के लिये जितना खोदना जरूरी है, उतने नीचे तक खुदाई भय भी नहीं हुई। फोयले की खान खोजने के लिये मनुष्य पृथ्वी के जितना नीचे उतरा है वह एक मील से बहुत अधिक नहीं है। इससे केवल इतनी ही खबर मिली है कि जितना ही पृथ्वी के नीचे की ओर जाया जाता है उतना ही, एक निर्दिष्ट मात्रा में, ताप बढ़ता जाता है। और भी नीचे कितनी गर्मी है, यह बात ज्वालामुखी पहाड़ों का ताण्डव देखा कर समझा जा सकता है। किन्तु इन तप्त उत्सों की गहराई भी पृथ्वी की मोटाई की तुलना में बहुत ही कम है। भूकम्प से पृथ्वी के भीतर की बहुत सी परतें मनुष्य को मालूम हुई हैं।

मिट्टी के नीचे कहीं उथल पुथल हो तो वहां से तरंगों के चक्र, एक के बाद दूसरे, आगे बढ़ते रहते हैं। सीस्मोग्राफ (seismograph) अर्थात् भूकम्प लिपि नामक एक यंत्र निकला है। उसके पट पर इन ऊंची नीची तरंगों के चिह्न अंकित होते हैं, उसमें उनके कापने का वेग जान पड़ता है।

भिन्न भिन्न देश की प्रयोगशालाओं में यह यंत्र रखा गया है। जिस-जिस सीस्मोग्राफ में भूकम्प की रेखा अंकित-हुई है, जांच करके देखा जाता है कि पृथ्वी

के भीतर से कितने वेग से कम्पन चला रहा है। पृथ्वी का समूचा भीतरी हिस्सा यदि एक ही पदार्थ से बना होता तो यह कम्पन वेग के मापने में अन्तर न पड़ता। लेकिन फर्क पड़ते देखा गया है। पृथ्वी की गहराई में कम्पन की तरंगें ऊपरी स्तरों की अपेक्षा अधिक जोर से चलती हैं। असल में पृथ्वी के भिन्न भिन्न स्तरों में भूकम्प का मान भिन्न भिन्न होता है। तरल या गैसाय पदार्थ के भीतर से कम्पन की तरंगें जिस प्रकार फैलती हैं, कठिन पदार्थ से हो कर उस प्रकार नहीं फैल पाती।

समूची पृथ्वी अगर जलमय होती तो उनका वजन जो कुछ होता उस से पाचगुना भारी जल बल-मयी इस पृथ्वी का वजन है। उस के ऊपरी स्तरों का पत्थर जल से तिगुना घना है। केवल ऊपरी द्वाय से उनका भार बढ़ गया हो सो यात नहीं है, वहा के वस्तु पुञ्ज का भार स्वभावत ही अधिक है। भूकम्प की गहराई से जाना जाता है कि पृथ्वी के केन्द्रबल में दो हजार मील तक उत्तम तरल पदार्थ है—जिस का अधिकांश ही गला हुआ लोहा है, ऐसा अन्दाज किया गया है। इस तरल पदार्थ की घेरे हुए पत्थर का जो स्तर है वह पानी से चारगुना भारी है।

जो हज़ा पृथ्वी को घेरे हुए है उसका ७८ फी सदी नाइट्रोजन और २१ फी सदी ऑक्सीजन है। हाईड्रोजन तथा और कई गैसों अन्यत मामूली मात्रा में हैं। ऑक्सीजन बड़ा मिलनसार गैस है, लोहे के साथ मिश्रण मोचा लगा देता है, अगर

पदार्थ के साथ मिल कर आग जला देता है—इस प्रकार निरन्तर वायु मण्डल में उसका बहुत हिस्सा खर्च होता रहता है। ऊपर पेड़ पौधे हवा के अंगाराम्ल गैस से अपने मतलब का अंगार घसूल करके उसका आविस्जन वाला हिस्सा हवा को लौटा देते हैं। ऐसा न होता तो अंगाराम्ल गैस से ही पृथ्वी भर जाती और आदमी साँस लेने की भी हवा न पा सकता।

आसमान में बहुत ऊँचाई तक हवा में विशेष परिवर्तन नहीं होता। और भी अधिक ऊँचे जाने पर जो गैसें मिल कर हवा बनती हैं उनका बहुत कुछ वहाँ नहीं पहुँच पाता। सूक्ष्म सम्भव, सब से हल्की दो गैसें, अर्थात् हीलियम और हाईड्रोजन से ही बहा फी हवा बनी है।

ग्राह्य घनत्व कम होते जाने के कारण हवा बहुत ऊपर तक उठ गई है। ग्राह्य में पृथ्वी पर जो उत्का पिण्ड गिरा करते हैं, वे पृथ्वी की हवा से रगड़ खा कर जल उठते हैं, उन में से अधिकांश का यह जलना १२० मील ऊपर दिखाई देता है। इसलिये यह मान लेना होगा कि उसके और भी ऊपर बहुत दूर तक हवा है जिसके भीतर से आते आते अन्त में ये इस जलन की अवस्था को प्राप्त होते हैं।

सूर्य का प्रकाश नौ करोड़ मील पार करके पृथ्वी तक आता है। ग्रह वेष्टन-कारी आकाश की शून्यता को पार करके आते समय तेज का बहुत अधिक क्षय नहीं होता। अर्थात्

५. १. गर्मी ले कर वह वायुमण्डल के ५

में पहुँचना है। इतने प्रचण्ड धक्के से वहाँ की हवा के परमाणु निश्चय ही चूँच विचूर्ण हो जाते हैं, एक भी परमाणु पूरा नहीं रहता। हवा के मर्राख बग में दूटे हुए परमाणुओं का जो स्तर रचिा हुआ है उसे एफ् २ ( 1' 2 ) नाम दिया गया है।

जहाँ गर्ज होने से उंची हुई मृय की किरणें नीचे के घनतर वायुमण्डल पर जाफमण करती हैं, जहाँ भी दूटे परमाणुओं के स्तर का उद्भव होता है, उसे एफ् १ ( 1, 1 ) स्तर नाम दिया गया है।

और भी नीचे और भी घना हवा में सृजे किरणों के आघात से एगु उने हुए परमाणुओं का एक स्तर है जिसे इ ( I ) स्तर कहते हैं।

सूर्य किरणों की उगना पार की रश्मि का उग रहत कुछ गर्ज हो जाता है, वह नि म्य हो कर नीचे की हवा तक बहुत थोड़ी मात्रा में पहुँच पाती है। यही हमारे लिये गामीमत है। अगर वह अधिक जाता तो साहाय्य मुश्किल हो जाता।

सय किरणों के सिवा और भी उइ 'बाले पहाड' दूर से हवा की अदृश्य गदाघात करने के लिये आया करते हैं। जैसे उल्का, इनकी रात पहले ही उताइ गयी है। इनकी रगड से तीन हजार से ज़ेकर सात हजार फारेनहाइट डिग्री तक का ताप जाग पडता है, इससे उगनी पार के प्रकाश के तीक्ष्ण बाण तरकस से निकल पडते हैं और हवा के परमाणुओं के देह पर परस कर उन्हें जला कर छारछार कर देते हैं। इससे

सिमा एक और रश्मि के प्रसरने की दान पहले ही पताई गई है। यह रुस्मिक रश्मि है। ससार में यही सत्र से प्रगल शक्ति का ग्राहन है।

पृथ्वी की हवा में आक्सिजन, नाइट्रोजन आदि गैसों के कोटि कोटि परमाणु भरे पड़े हैं। ये अत्यन्त तेजी के साथ निरन्तर चक्कर मारते रहते हैं, आपस में धक्कामुक्की और ठेलाठेली तो चल ही रही है। जो कण हल्के हैं उनके दौड़ने का वेग अधिक होता है। सारे दल का जो वेग होता है उसकी अपेक्षा स्वतंत्र छिटके हुए परमाणु का वेग बहुत अधिक होता है। इसीलिए पृथ्वी के ग्राहरी आगन की सीमा से हाईड्रोजन के गुचरे अणु प्रायः ही पृथ्वी का आकर्षण काट कर बाहर को भाग जाते हैं। लेकिन आक्सिजन और नाइट्रोजन के अणु कणों की गति दल के बाहर कभी भी अधीर भगोड़ों की तेजी नहीं पाती। इसी लिये पृथ्वी के वायुमण्डल में इनकी कमी नहीं पड़ती। केवल हाईड्रोजन ही, जो पृथ्वी की तमणामस्था में उसकी सत्र से बड़ी गैसीय सम्पत्ति था, धीरे धीरे अपना बहुत कुछ खो चुका है।

बड़े बड़े परगाले पक्षी पंखों को यों ही सुला रख कर दूर तरु आसमान में चहते-से रहते हैं, इस से जान पड़ता है कि हवा में इतना घनत्व जरूर है कि वह इन पक्षियों का आधार बन सकता है। असल में, कठिन और तरल पदार्थों की भाँति हवा का भी वजन पाया जाता है। मिट्टी के ऊपर कई मील तरु हवा के दबाव एक फीट लंबे और इतने चौड़े

पदार्थ पर प्राय २७ मन से भी अधिक पड़ता है। एक साधारण आदमी के शरीर पर इसका दबाव प्राय ४०० मन से अधिक पड़ता है। फिर भी हम उसका अनुभव नहीं कर पाते। जैसे ऊपर से जैसे ही नीचे से, जैसे दाएँ से वैसे ही बाएँ से, समान भाव से हवा का दबाव और धक्का लग रहा है, इसी लिये हवा का भार हमें स्पष्ट नहीं देता।

पृथ्वी का वायुमंडल अपन आवरण से दिन के समय सूर्य की गर्मी को बहुत कुछ रोक रखता है, और रात के समय महा शून्य की प्रश्रुतियों को भी प्रायः पहुँचाता है। बाद के शरीर पर हवा की ओढ़नी नहीं है, इसीलिये वह सूर्य की गर्मी से लौलटे हुए पाना के समान गर्म हो जाता है। और ग्रहण के समय पृथ्वी ज्यों ही उस पर अपनी छाया विस्तार करती है त्यों ही देखते देखते वह ठंडा हो जाता है। हवा होती तो वह गर्मी को रोक रखती। बाद को केवल यही अभाव नहीं है, हवा न होने के कारण वह एक धम गूगा है, वहाँ भी जरा सा शब्द होने का उपाय नहीं। विशेष भाव से हिलने पर हवा में नाना आयतन की सूक्ष्म तरंगें उठती हैं, वे ही हमारे कानके भीतरी पर्दे पर नाना भाँति के कंपन का आघात करती हैं, और यही तरंगें नाना भाँति की आवाज बन कर हमारे कर्णों के गोचर होती रहती हैं। हवा का एक और भी काम है। वह फराश की तरह सूर्य की उग्र किरणों को बिछा कर फैला देती है, नहीं तो जहाँ धूप पड़ती सिर्फ वहाँ पर प्रकाश हो सकता,

छाया नाम की कोई चीज ही न होती। तीव्र प्रकाश के प्रगल में ही घोर अन्धकार होता। वृक्ष की चोटी की धूप से आर्ये चौंधिया उठतीं और नीचे के तल्लदेश में निग्रिड काला अन्धकार हुआ रहता। घर की छत पर दोपहरी की धूप दमकती रहती और घरके भीतर होती अमात्रस्या की घोर अर्धरात्रि। दिया जलाने की रात सोचना भी गलत होता क्योंकि पृथ्वी की हवा में जो आक्सिजन गैस है उसी से सब चीजें जला करती हैं। (जब हवा ही नहीं होती तो आक्सिजन भी न होता और आक्सिजन न होता तो दिया तो क्या कोई भी चीज नहीं जल सकती।)

हम लोग प्रभ्यास से हवा का आक्सिजन खींचते हैं। उसके अणु हमारे प्राणवस्तु के अणु के साथ मिलकर धीरे धीरे उसे अदृश्य ज्वाला से जलाते रहते हैं। इसी लिये हम जब तक जीते रहते हैं तब तक हमारा पुन गर्म रहता है।

हवा को योगिक पदार्थ नहीं कह सकते, असल में यह मिलाधटी पदार्थ है। उस में नाना गैसों जमा हुई हैं, पर वे मिल कर एक बहीं हो गईं। हवा में जिस मात्रा में आक्सिजन है उस से तिगुना नाईट्रोजन है। यदि केवल आक्सिजन ही होता तो हमारा प्राणवस्तु जल जल कर फन का समाप्त हो गया होता। यह प्राणवस्तु कुछ अंश में जलता है और कुछ अंश में जल नहीं पाता। इसीलिये हम दो आतिशय के बीच में रह कर जी सकते हैं।



पदार्थ पर प्राय २७ मन से भी अधिक पड़ता है। एक साधारण आदमी के शरीर पर इम्फा द्वाय प्राय ४०० मन से अधिक पड़ता है। फिर भी हम उसका अनुभव नहीं कर पाते। जैसे ऊपर से जैसे ही नीचे से, जैसे दाएँ से वैसे ही बाएँ से, समान मात्र से हवा का दबाव और धक्का लग रहा है, इसी लिये हवा का भार हमें कष्ट नहा देता।

पृथ्वी का वायुमण्डल अपने आवरण से दिन के समय सूर्य की गर्मी को बहुत-कुछ रोक रखता है, और रात के समय महा शून्य की प्रचंड सर्दियों को भी बाधा पहुँचाता है। चाँद के शरीर पर हवा की ओढ़नी नहीं है, इसीलिये वह सूर्य की गर्मी से ज्वलते हुए पानी के समान गर्म हो जाता है। और ग्रहण के समय पृथ्वी ज्यों ही उस पर अपनी छाया बिस्तार करती है त्यों ही देखते देखते वह ठंडा हो जाता है। हवा होती तो वह गर्मी को रोक रखती। चाँद का केवल यही अभाव नहीं है, हवा न होने के कारण वह एक दम गूगा है, वहाँ भी जरा सा शब्द होने का उपाय नहीं। विशेष मात्र से हिलने पर हवा में नाना आयतन की सूक्ष्म तरंगें उठती हैं, वे ही हमारे कानों कीतरा पर्त पर नाना भाँति के कंपन का आघात करती हैं, और यही तरंगें नाना भाँति की आवाज बन कर हमारे कर्णों के गोचर होती रहती हैं। हवा का एक और भी काम है। वह फराश की तरह सूर्य की उग्र किरणों को बिछा कर फैला देती है, नहा तो जहा धूप पड़ती सिर्फ वहाँ पर प्रकाश हो सकता,

आदि सूर्य से जिस प्रकार पृथ्वी निकल आई है उसी प्रकार गणप-देही आदिम पृथ्वी से चाँद निकल जाया है, नियम दोनों जगह एक ही है। इसके बाद करोड़ों वर्ष गीत गये, पृथ्वी ठंडी हो कर कटी हो गई, चाँद भी ऐसा ही हो गया है।

० लाख ३६ हजार मील दूर रह कर २७ दिन और ८ घंटे में चंद्रमा पृथ्वी की एक परिक्रमा कर रहा है। इस परिक्रमा के समय वह एक ही पीठ पृथ्वी की ओर फिरा रखता है। इस का व्यास प्राय २१६० मील लगा है और इसका उपादान जल से प्राय ३॥ गुना भारी है। अन्यान्य ग्रह तक्षत्रों की तुलना में पृथ्वी से इसकी दूरी सूर ही कम है, इसलिये हम इसे इतना उज्ज्वल और बड़ा देखते हैं। अस्सी चाँदों को अगर एक साथ तौला जाय तो उनका वजन पृथ्वी के बराबर होगा। दूररीन से बाद को देखने से स्पष्ट ही दिगता है कि वह पृथ्वी के पदार्थों के समान ही पदार्थों से बना है। उमड़े ऊपर बड़े बड़े गहर और बड़े बड़े पर्यंत हैं।

पृथ्वी के आकर्षण से ही चंद्रमा पृथ्वी के चारों ओर घूम रहा है। एक चक्का लगाने में उसे एक महीने से कुछ कम समय लगता है। औसतन उसकी चाल एक सेकेड में आध मील से ज्यादा नहीं है। पृथ्वी इतनी देर में २० मील दौड़ जाती है। अपने मेरुदण्ड के चारों ओर घूमने में उसे एक

सारा वायुमण्डल पानी से भीजा हुआ-सा है। मेघ में जितना जल रहता है उस से कहीं अधिक रहता है हवा में। हमारा सारा शरीर थोड़ा थोड़ा कच्चे इस पानी को मोटा गढ़ा है। अत्यन्त सूखा हवा में चमटा मृग्य कर जय फटता रहता है तब इसका प्रमाण मिलता है।

ऊपर के वायुमण्डल के दूरे हुए परमाणुओं के घेघृत स्तर की बात पहले ही कह चुका हूँ। इनके सिवा सहज हवा के भी दो स्तर हैं। इसका जो पहला स्तर पृथ्वी के सतह से अधिक नजदीक है उसका वैज्ञानिक नाम है ट्रोपोस्फियर (troposphere), हिंदी में इसे भुज स्तर कह सकते हैं। इसकी चौड़ाई पाँच से लेकर दस मील से अधिक नहीं है। सारे वायुमण्डल के माप की तुलना में इस क्षुब्ध स्तर की ऊँचाई बहुत ही कम है, लेकिन हवा के समस्त पदार्थों का प्रायः नब्बे प्रतिशत इसी में है। इसी लिये अन्य स्तरों का अपेक्षा यह स्तर बहुत घना है। पृथ्वी से एक दम सटा हुआ होने के कारण उसकी गर्मी की छूट उसे ऋगी ही रहती है। उस उत्ताप के प्रकट होने से हवा यहाँ निरन्तर ढोढ़ घूँप करती रहती है। इसी लिये बेजल इन्दी स्तर में आधी और वर्षा होती रहती है। इसके और ऊपर जो स्तर है उसमें पृथ्वी की गर्मी आधी-सूफान की रफ्तानी नहीं कर पाती। इसीलिये वहाँ की हवा शान्त है। पंडितों ने इसका नाम दिया है स्ट्रैटोस्फीयर (stratosphere), हिंदी में स्तंभ स्तर कहा जा सकता है।

आदि सूर्य से जिस प्रकार पृथ्वी निकल आई है उसी प्रकार गणपदेही आदिम पृथ्वी से चाँद निकल जाया है, नियम दोनों जगह एक ही है। इसके बाद करोड़ों वर्ष गीत गये, पृथ्वी ठंडी हो कर कड़ी हो गई, चाँद भी ऐसा ही हो गया है।

२ लाख ३६ हजार मील दूर रह कर २७ दिन और ८ घंटे में चंद्रमा पृथ्वी की एक परिभ्रमा कर रहा है। इस परिभ्रमा के समय वह एक ही पीठ पृथ्वी की ओर फिरा रहता है। इस का व्यास प्राय २१६० मील लगा है और इसका उपादान जल से प्राय ३॥ गुना भारी है। अन्यान्य ग्रह नक्षत्रों की तुलना में पृथ्वी से इसकी दूरी दूर ही कम है, इसलिये हम इसे इतना उज्ज्वल और बड़ा देखते हैं। अस्सी चाँदों को अगर एक साथ तौला जाय तो उनका वजन पृथ्वी के बराबर होगा। दूरबीन से चाँद को देखने से स्पष्ट ही दिखता है कि वह पृथ्वी के पदार्थों के समान ही पदार्थों से बना है। उसके ऊपर बड़े बड़े गह्वर और बड़े बड़े पर्वत हैं।

पृथ्वी के आकर्षण से ही चंद्रमा पृथ्वी के चारों ओर घूम रहा है। एक चक्कर लगाने में उसे एक महिने से कुछ कम समय लगता है। औसतन उसकी चाल एक सेकेंड में आध मील से ज्यादा नहीं है। पृथ्वी इतनी देर में २० मील दौड़ जाती है। अपने मेरुदण्ड के चारों ओर घूमने में उसे एक

महीने के उगवर ही समय लगता है। उसके दिन और रात एक ही समान घोर मथर जेग से चलते हैं।

चाँद के चक्कर पर से हिसार लगा कर देखा गया है कि यदि किसी चीज का जेग प्रति सेकेण्ड डेढ़ मील हो तो वह चाँद के आरूपण से निकलकर बाहर निकल जा सकता है। चाँद जिस परिमाण में धूप तापता है उससे उसकी तपी हुई पीठ पर हुआ जलना गर्म हो उठी होगी कि वह अपनी हवा के परमाणुओं को रोक नहीं सका होगा, इसी लिये वे सब निकल पड़े होंगे। जहा हुआ का दवाज नहीं है वहा पानी सूख शीघ्र ही भाप बन जाता है। भाप होने के साथ ही साथ पानी के परमाणु गमी से खंचल हो कर चद्रमा का घघन छिन्न करके बाहर चले गये होंगे। जहाँ जल भी नहीं, वायु भी नहीं, वहा किसी का जीवन रह सकता है, यह बात हम लोगों की जानी हुई नहीं है। चाँद को एक पिण्डीभूत मग्भूमि कह सकते हैं।

रात को जिन्हें हम ताराओं का टूटना कहते हैं वे तारा नहीं हैं, यह बात आज किसी को समझाना नहीं पड़ेगा। पृथ्वी के आरूपण से ये उल्का पिंड लाख-लाख की संख्या में दिन रात गिर रहे हैं। उन में के अधिकांश हवा में रगड़ खाकर जलकर राख हो कर गिर जाते हैं। जो कुछ बड़े आकार के हैं, वे जलते जलने मिट्टी पर आ गिरते हैं, रम की तरह फट जाते हैं, और चारों ओर जो पाते हैं उसे ही जला कर भस्म कर देते हैं।

चाँद पर भा यह उल्का घृष्टि हो रही है। उन्हें रोक और

जला कर राख कर सके, ऐसी हवा वहाँ थोड़ी सी भी नहीं है। इसी लिये वे अवाध भाव से चाँद के सारे शरीर पर ढेला मार रहे हैं। वेग भी कम नहीं है, सेकेंड में प्राय ३० मील, इसी लिये चोट भी खूब करारी कर रहे हैं।

चाँद के बड़े बड़े गह्वरों की उत्पत्ति अग्नि-उत्स से ही है। जो गला हुआ पदार्थ और राख उससे निकल आया था, हवा न होने के कारण इनकी युग बीत जाने पर भी उनमें कोई परि-वर्तन नहीं हुआ। राख से ढका होने के कारण सूर्य का प्रकाश आवरण को भेद कर बहुत नीचे नहीं जा पाता, और नाचे की गर्मी भी ऊपर नहीं जा पाती।

चाँद के जिस ओर सूर्य का प्रकाश पड़ता है उस तरफ की गर्मी प्राय खोलने हुए पानी के समान है और जिधर नहीं पड़ता उस ओर की सर्दी बर्फ की ठंडक से भी प्राय २५० डिग्री नीचे की होती है। चंद्रग्रहण के समय जब पृथ्वी की छाया चाँद पर पड़ती है तो उसका उन्नाप कुछ ही मिनटों में प्राय ३४६ डिग्री कम हो जाता है।

हवा न होने के कारण और राख के आवरण को भेद कर के सूर्य की गर्मी भीतर प्रवेश न कर सकने के कारण चाँद के पास किसी प्रकार का सचित उन्नाप है ही नहीं, इसी लिये इतना शीघ्र उसकी गर्मी कम हो जाती है। इन सब प्रमाणों से कहा जा सकता है कि चाँद का प्राय सब स्थान ज्वालामयी पहाड़ की राख से ढका हुआ है।

पंक्त जम-जम कर पृथ्वी पर स्थान स्थान पर गड़िया मिट्टी के पहाड़ बन गये हैं।

त्रिभुव रचना के मूलतम उपकरण परमाणु हैं, ये ही परमाणु अचिन्तनीय त्रिभुव नियमों के वशवर्ती हो अतन्त सूक्ष्म जीव कोष के रूप में महत् रूप। प्रत्येक कोष सम्पूर्ण और स्वतन्त्र है, उन में से प्रत्येक के भीतर एक अपनी ही आश्चर्यजनक शक्ति है जिसके द्वारा बाहर से स्याद लेकर अपने को पुष्ट करते हैं, अनापश्यक को त्याग देते हैं और अपने आप को बहु-गुणित कर सकते हैं। यह जो बहु-गुणित करने की शक्ति है उसके भीतर से—मृत्यु से होती हुई—प्राण की धारा प्रवाहित हो रही है।

प्राणलोक में यह जीवाणु कोष अकेला हो कर दिखाई दिया। इसके बाद ये जितना ही संघर्ष होते गये उतना ही जीव जगत् में उत्कर्ष और वैचित्र्य समग्र होने लगा। जिस प्रकार फरोटों नक्षत्रों के समग्र से एक एक नीहारिका घनी है उसी प्रकार फरोटों जीव कोषों के समावेश से एक एक देह है। घशास्त्री के भीतर से यह देह-जगत् एक प्रवाह सृष्टि करके नये नये रूपों में अग्रसर हो रहा है। हम लोग अब तक नक्षत्रलोक और सूर्यलोक की चर्चा कर आये हैं, उनकी अपेक्षा कई गुना अधिक आश्चर्यजनक है यह प्राणलोक। उद्दाम तेज को शान्त करके यह भुद्रायतन ग्रह रूप पृथ्वी जिस अनतिशुद्ध परिणति को प्राप्त हुई है, केवल इसी अवस्था में प्राण और उसके सहचर मन का

जातिमान समब हुआ है। यह बात सब सोचें हैं तो भयंकर  
करना ही पड़ता है कि मसारा का यह परिमति ही छोड़ परिमति  
है। यद्यपि प्रमाण नहीं है और प्रमाण पता नष्ट प्रमाण  
भी है, तौमी मन यह बात नहीं मानना चाहता कि बिन्दु  
ग्रहाण्ड में जार धारण योग्य चैत्यप्रवाह प्रवाह केन्द्र रूप  
पृथ्वी पर ही घटी है और इस तिसार से दृष्टी हो मसारा का  
धारा का एकमात्र व्यक्तित्व है।

---



## उपसंहार

एक बार जगन् के सर से बड़े आश्चर्य का समाद ले कर कंगोडो चप पहले तरण पूज्य पर एक ठोटी सी जीवकोष की कृपा दिखाइ दा जो हमारी आर्यों के लिये अदृश्य थी। वह निरुत्तरी उड़ी महिमा का दर्शनात्म लेकर जाइ थी और फिर भी जिस गोपन मात्र के साथ। उमरा अनुपम कलामय गुटिनायें देह देह में नई नई परीक्षाओं से गुजरता हुआ निरन्तर चलता आ रहा है। योजना करने की, संशोधन करने की, अन्यन्त जटिल समतत्र के उद्घाटन और संचालन करने की युद्धि प्रच्छन्न भाव से इस कोष में कहीं छिपी हुई है, और जिस प्रकार इनके भीतर से अपने आप को सन्निवृत्त बना रही है, और उत्तरी तर अभिज्ञता का सच्य कर रही है—सोचने पर इसका कुछ विचारा नहा मिलता। अति मृदु वेदनाशील जीवकोषों का समग्र यशानुक्रम से जीव देह के नाता जग प्रत्यक्ष में यथोचित ढंग से समष्टि राध रहे हैं, और पता नहा, जिस प्रकार अपने ही भीतर के उद्यम से देह त्रिया का ऐसा आश्चर्यजनक कर्तव्य विभाग कर रहे हैं। पाण्डित्यों के जो कोष हैं, उनके वाम एक वे हैं और मस्तिष्क के जो कोष हैं उनके दायें एक दम

दूसरी तरह के हैं। धीरे धीरे भी जीवाणु कोष सनी मूल्य  
एक ही जाति के हैं। किसरी आधा से इनके कुछ कार्य  
का पैदावार हुआ और फिर इनके विभिन्न कार्यों का मिलने  
समय करके स्वास्थ्य नामक एक सामंजस्य का प्रमाण मिला।  
जीवाणु कोष की दो प्रधान क्रियाएँ हैं, बाहर से रोगों के  
संग्रह करके जीवित रहना और बढ़ते रहना, तथा अपने ही  
समान जीवों को उत्पन्न करके चर धारा की चलाते जाना।  
यहाँ से शुरू से ही इस आत्मरक्षा और चर धारा के जटिल  
प्रयास ने मन पर निर्भर किया।

अप्राण विश्व में जो सर घटनाएँ घटी हैं उसके पीछे सोने  
जड़ जगत की भूमिका है। मन इन घटनाओं को जानता है,  
इस जानने के पीछे मन की कोई विश्व भूमिका कहाँ है। पत्थर  
लोहा, और गैसों का आपस में जानने का तो कोई सम्पर्क नहीं  
है। इस दुःसाध्य प्रश्न को लेकर एक विशेष युग में प्राण और  
मन इस पृथ्वी पर आये—अति शुद्ध जीवकोष को चला  
यना कर।

पृथ्वी की सृष्टि के इतिहास में इनका आग्रहान्वित  
नीय है। लेकिन जो कुछ है उन सर के साथ कोई सन्धहीन  
एकान्त आकस्मिक अभ्युत्थान को हमारी बुद्धि मानना नहीं  
चाहती। हम इस जड़ विश्व के साथ मनोविश्व के मूल गत वे  
की कल्पना सर्वव्यापी तेज या ज्योति पदार्थ के रूप में  
सकते हैं। बहुत दिनों के बाद विज्ञान ने आग्रहान्वित

कि ऊपर ऊपर से देखने से जो स्थूल पदार्थ ज्योतिहीन दिखाई देते हैं, उनमें भी प्रच्छन्न रूप में नित्य ही ज्योति की क्रिया चल रही है। उसी महाज्योति का सूक्ष्म विकास प्राण में है और और भी सूक्ष्मतर प्रकाश है चैतन्य में और मन में। त्रिभुव सृष्टि के आदि में जब महाज्योति के सिवा और कुछ नहीं पाया जाता तो कहा जा सकता है कि चैतन्य में उसीका प्रकाश है। जड से लेकर जीव तरु में, एक एक करके पर्दा उठने उठने मनुष्य में आ कर इस महा चैतन्य का आररण मोचन करने की साधना चल रही है। जान पड़ता है चैतन्य की इस मुक्ति की अभिव्यक्ति ही सृष्टि का अन्तिम परिणाम है।

---

